Reg. No. B. 719.

ॐ

जैनहितैषी ।

साहित्य, इतिहास, समाज और धर्मसम्बन्धी
लेखोंसे विभूषित

मासिकपत्र ।

सम्पादक और प्रकाशक—नाथूराम प्रेमी ।

भाग ११ | आश्विन श्रीवीर नि० संवत २४५१ | अंक १२

विषयसूची ।

१ उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला और षष्ठिशतक ६७१
२ जैनोंकी राजभक्ति और देशसेवा ... ६८२
३ अंजना (कविता) ६८७
४ शान्ति और सुखकी वृद्धि करनेके नियम ७०२
५ द्वेष ७०३
६ इतिहास प्रसंग ७०६
७ समालोचनाकी आलोचना ७१३
८ पुस्तकपरिचय ७२८
९ विविध प्रसङ्ग ७५०
१० जैनहितैषीका कार्यापटल ७६१

पत्रव्यवहार करनेका पता—
मैनेजर, जैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, गिरगाँव बम्बई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हाल ही छपी नई तीन पुस्तकें।

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

इसे नागरीप्रचारिणीपत्रिकाके सम्पादक और हिन्दीशब्दसागरके सहकारी सम्पादक बाबू रामचंद्रजी वर्माने लिखा है। यह कई अँगरेज़ी ग्रन्थोंको पढ़कर और उनका आशय समझकर अपने ढगँ पर इस देशके लिए उपयोगी बनाकर लिखा गया है। भाषा बहुत ही सरल और शुद्ध है। सफलताकी इच्छा रखनेवाले प्रत्येक व्यक्तिको इसे पढ़ना चाहिये। व्यापारी जैनोंके लिए बड़े कामकी चीज़ है। स्कूलोंमें लायब्रेरियोंमें रखने और इनाममें देनेके लिए बहुत उपयोगी है। मूल्य कपड़ेकी जिल्दका ॥।) और सादीका ॥-)

अन्नपूर्णाका मन्दिर।

यह बंगभाषाकी सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती निरूपमा देवीके उपन्यासका अनुवाद है। बहुत ही पवित्र पुण्यमय और करुणरसपूर्ण ग्रन्थ है। इसे स्त्री पुरुष बालक युवा सभी पढ़कर आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। अभी इसको प्रकाशित हुए एक ही वर्ष हुआ है कि इसके अँगरेज़ी और मराठी अनुवाद हो चुके हैं। हिन्दीके सुप्रसिद्ध कवि श्रीयुत बाबू मैथिलीशरणने इसे बहुत ही पसंद किया है और उन्हींकी प्रेरणासे यह हिन्दीमें छपाया गया है। मूल्य पक्की जिल्दका १) और सादीका ॥।)।

स्वावलम्बन (सेल्फ हेल्प)।

यह सेमुएल स्माईल्सके प्रसिद्ध अँगरेज़ी ग्रंथका स्वतंत्र अनुवाद है। मूल ग्रंथमें जितने उदाहरण हैं। वे सब विदेसी पुरुषोंके हैं; परंतु इसमें उनके स्थानमें सैकड़ों देशी पुरुषोंके उदाहरण चुन चुन कर दिये गये हैं; इसके लिए बहुत परिश्रम किया गया है। पचासों पुस्तकें पढ़ना पढ़ी हैं। विदेशी उदाहरणोंमेंसे वे सब ज्योंके त्यों रहने दिये हैं, जो बहुत ही महत्त्वके हैं और जिनके कारण इस पुस्तकका महत्त्व है। स्माइल्सके इस ग्रन्थकी प्रशंसा करनेकी ज़रूरत नहीं है। अँगरेज़ीमें इसकी लाखों कापियाँ प्रतिवर्ष खपती हैं। अपने पैरोंपर आप खड़े होनेकी, अपने ही भरोसे अपनी उन्नति करनेकी, अपनी शक्तिका विश्वास दिलानेकी शिक्षा इसमें कूट कूट कर भरी है और जो इस देशके लिए बहुत आवश्यक है। पक्की कपड़ेकी जिल्दका मूल्य १॥।) सादीका १॥)।

मिलनेका पता-**हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,**
हीराबाग, गिरगांव-**बम्बई।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनहितैषी ।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्सर्वज्ञनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

११ वाँ भाग | आश्विन, वीर नि० सं० २४४१। | अंक १२.

उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला और षष्ठिशतप्रकरण।

(एक खोज)

पाठक उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला नामक ग्रन्थसे परिचित होंगे । स्वर्गीय पं० भागचन्द्रजीने विक्रम संवत् १९१२ में इसकी एक भाषा-वचनिका लिखी है और वह कुछ परिवर्तितरूपमें पं० जयचन्द्र श्रावणे द्वारा वर्धामें छप भी चुकी है । मूल ग्रन्थ प्राकृतमें है । उसमें १६१ गाथायें हैं । नेमिचन्द्र भण्डारी नामके विद्वान् उसके रचयिता हैं । जैनधर्मके साधु निस्पृही और परिग्रहादिसे रहित होते हैं, वे चैत्यों या नगरोंमें नहीं रहते—बाहर वसतिकाओंमें रहते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं, उनका चरित्र ऊँचा होता है, जैनधर्ममें उन्हींको पूज्य बताया है, इसके विरुद्ध आजकलके साधु बहुत ही शिथिलाचारी हैं, उनकी उपासना कदापि न करना चाहिए; मुख्यतः इन्हीं बातोंका इस ग्रन्थमें प्रतिपादन किया गया है।

जबसे इस ग्रन्थकी भाषावचनिका हुई है और स्वाध्याय करनेवालोंमें इसका प्रचार हुआ है तबसे यह दिगम्बर सम्प्रदायका ही ग्रन्थ समझा जाने लगा है। लोगोंको इसके दिगम्बर ग्रन्थ होनेमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं है; परन्तु वास्तवमें यह एक श्वेताम्बर सम्प्रदायके विद्वान्‌की रचना है।

मोक्षमार्गप्रकाशमें पं० टोडरमलजीने एक जगह 'संघपट्टक' नामक श्वेताम्बर ग्रन्थका एक श्लोक उद्धृत किया है। जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब प्रूफ संशोधन करते समय मैंने देखा कि संघपट्टकका उक्त श्लोक अशुद्ध है। मेरे पास मोक्षमार्गकी जो प्रतियाँ थीं, जब उनसे श्लोकका पाठ शुद्ध नहीं हुआ तब मैंने संघपट्टककी खोज की और सौभाग्यवश मुझे वह छपा हुआ मिल गया, जिससे उक्त श्लोक शुद्ध कर दिया गया। उसी समय मैंने संघपट्टककी विस्तृत भूमिका बाँची जिसमें संघपट्टकके टीकाकार **जिनपतिसूरिके शिष्य नेमिचन्द्र भण्डारी** और उनके 'षष्ठिशत प्रकरण,' नामक ग्रन्थका उल्लेख पढ़कर मुझे सन्देह हुआ कि उपदेशसिद्धान्तरत्नमालाके कर्ता और जिनपतिसूरिके शिष्य नेमिचन्द्र भण्डारी एक ही होंगे और आश्चर्य नहीं जो षष्ठिशत प्रकरणका ही नाम उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला रख दिया गया हो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब मैं षष्ठिशतप्रकरणकी खोज करने लगा; क्योंकि इस ग्रन्थके मिले बिना उक्त सन्देह दूर नहीं हो सकता था।

अभी पर्युषण पर्वमें मैं एकदिन बम्बईकी "मुनि मोहनलालजी जैन सेन्ट्रल लायब्रेरी" को देखनेके लिए गया था कि अचानक उसका सूचीपत्र देखते समय मेरी दृष्टि षष्ठिशतप्रकरण पर जा पड़ी और मुझे उक्त लायब्रेरीमें इसकी दो प्रतियाँ प्राप्त हो गईं। ये दोनों ही प्रतियाँ सावचूरि या सटीक हैं। टीका धवलचन्द्र गुरुके किसी शिष्य महाशयकी लिखी हुई है। पहली प्रति जीर्ण और प्राचीन है, लगभग ३०० वर्ष पहलेकी लिखी हुई जान पड़ती है। दूसरी प्रति हालकी ही है, संभवतः पहली परसे ही नकल कराई गई है। इन प्रतियोंसे मुझे इस विषयमें कोई सन्देह नहीं रहा कि नेमिचन्द्र भण्डारी श्वेताम्बरी थे और उनका षष्ठिशत प्रकरण ही हमारे यहाँ उपदेशसिद्धान्तरत्नमालाके नामसे प्रचलित हो रहा है।

नेमिचन्द्र भण्डारी ओसवाल जातिके श्वेताम्बर जैन थे। उनका 'भण्डारी' उपपद बतला रहा है कि वे ओसवाल थे। छपी हुई उपदेशसिद्धान्तरत्नमालाके टाइटिलपेजपर उनके नामके साथ 'आचार्य' पद जोड़ा गया है; परन्तु यह भूल है—वे श्रावक थे। उपदेशसि० र० की १५६ वीं गाथाको

---

१ स्वस्मृतिबीजकमेतत् षष्ठीशतप्रकरणस्य सद्वृतेः।
आलिखल्लेखकवदयं शिष्यः श्रीधवलचन्द्रगुरोः॥

२ **जइ विहु उत्तमसावय-पयडीए चडणकरणअसमत्थो।**
तहवि पहुवयणकरणे मणोरहो मज्झ हिययम्मि॥ १५६॥

अर्थात् यद्यपि मैं उत्तम श्रावककी पैड़ीपर चढ़नेको असमर्थ हूँ, तथापि जिन-वचनके करनेमें मेरे हृदयमें मनोरथ वर्तै है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पढ़नेसे इस विषयमें कोई भी सन्देह नहीं रहता है। वे जिनपतिसूरि नामक प्रसिद्ध आचार्यके शिष्य थे जिन्होंने कि जिनवल्लभसूरिके संघपट्टककी विशाल संस्कृत टीका लिखी है। वे 'सज्जन' के पुत्र और जिनेश्वरसूरि नामक आचार्यके पिता थे, अर्थात् उनका एक पुत्र दीक्षित होकर पीछे आचार्यपदको प्राप्त हो गया था। टीकाकी उत्थानिका और अन्तिम गाथाकी टीकासे इन बातोंका पता लगता है:—

"इह प्राप्तसकलमानुष्यादिसामग्री केन पुंसा ज्ञातचारित्राधारभूते श्रीसम्यक्त्व एव प्राक् प्रयतितव्यमित्याकलय्य नेमिचन्द्रनामा श्रावकस्तदुपदेष्टृगीतार्थसंविग्नगुरुं परीक्ष्यन् चिरस्य परिभ्रम्य तत्कालवर्तिसंविग्नगीतार्थमुनिजनाग्रगण्यं श्रीजिनपतिसूरिसुगुरुं लब्धवान्। ततस्तेभ्यो ज्ञातशुद्धदेवादितत्त्वः परांश्च देवादितत्त्वेषु दृढयन्निदं प्रकरणं चक्रे।" अन्तिमगाथा-**" एवं पूर्वोक्तयुक्त्या भाण्डागारिकः स चासौ नेमिचन्द्रश्च सज्जनसुतः श्रीजिनेश्वरसूरिपिता च तेन रचिता कतिचिद्गाथा..."**

खरतरगच्छकी पट्टावलीके देखनेसे मालूम होता है कि जिनपतिसूरि ४६ वें पट्टके आचार्य थे। विक्रमसंवत् १२२३ में उन्हें आचार्यपद मिला था और संवत् १२७७ में पालणपुरमें उनका स्वर्गवास हुआ था। इनके पट्ट पर जिनेश्वरसूरि संवत् १२७८ में बैठे थे। ये ही जिनेश्वरसूरि नेमिचन्द्र भण्डारीके पुत्र थे। पट्टावलीमें लिखा है कि इनका मूल नाम अम्बड़, पिताका नाम नेमिचन्द्र भाण्डागारिक और माताका लक्ष्मी था। इनका जन्म मारोठमें संवत् १२४५ की मार्गशीर्ष सुदी ११ को हुआ था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केवल १० वर्षकी अवस्थामें खंडानगरमें इन्होंने दीक्षा ले ली थी! इस प्रकार नेमिचन्द्र भण्डारीके गुरु जिनपतिसूरि और पुत्र जिनेश्वरसूरिका समय निर्णीत होनेसे निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि वे विक्रमकी तेरहवीं शताब्दिके विद्वान् हैं।

यहाँ यह शङ्का की जा सकती है कि उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला दिगम्बर ग्रन्थ ही है; क्या आश्चर्य है जो भण्डारीने ही उसे अपना बना लिया हो। परन्तु इसका समाधान स्वयं उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला ही कर देती है। रत्नमालाकी १०७–०८ नम्बरकी गाथाओंको आप ध्यानसे पढ़िए:—

अज्जवि गुरुणो गुणिणो सुद्धा दीसंति तडयडा केई।
पर जिणवल्लहसारिसो पुण्णो वि जिणवल्लहो चेव ॥ १०७ ॥
वयणे वि सुगुरु जिणवल्लहस्स कासिं ण उल्लसई सम्मं।
अह कह दिनमणितेयं उलुयाणं हरइ अंधत्तं ॥ १०८ ॥

इनका अर्थ यह है कि "आजकल भी कितने ही गुणी और शुद्ध प्ररूपणा करनेवाले गुरु साक्षात् दिखलाई देते हैं; परन्तु जिनवल्लभके समान तो जिनवल्लभसूरि ही हैं, अर्थात् इस विषयमें उनकी बराबरी करनेवाला कोई नहीं है। परन्तु जिनवल्लभके वचनोंसे भी जो किसी किसीको सम्यक्त्व उल्लसित नहीं होता है, सो इसमें उनका दोष नहीं। क्या सूर्यका तेज उल्लुओंका अन्धापन दूर कर सकता है?"

संस्कृतटीकाकार भी इसका यही अर्थ करते हैं:—

"**अस्मिन्नपि काले गुरवो गुणिनो ज्ञानादियुक्ताः शुद्धाः शुद्धप्ररूपकाः साक्षाद्दृश्यन्ते, तडयडेति देश्यत्वात्किंयाकठोराः,**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केऽपि कियन्तोऽपि । परं जिनवल्लभसदृशः पुनरपि जिनवल्लभ एव । स हि श्रीजिनेश्वराचार्यदीक्षितोऽपि चैत्यकावासं सकटुविपाकं मत्वा संवेगात्सुविहितशिरोमणिश्रीमदभयदेवसूरिपार्श्वमुपसम्पन्न इति । वचनात्सुगुरु जिनवल्लभस्यापि केषांचित्सम्यक्त्वं नोल्लसति । अत्र दृष्टान्तमाह । अथेति पक्षान्तरे दिनमणितेज उलूकानानामन्धत्वं कथं केन प्रकारेण हरति ॥ "

इस टीकासे इतनी बात और भी मालूम हो जाती है कि जिनवल्लभसूरि पहले जिनेश्वराचार्यके दीक्षित थे; परन्तु पीछे साधुओंका मन्दिरमें रहना बुरा समझकर अभयदेवसूरिके शिष्य हो गये थे। इतिहाससे पता लगता है कि ये अभयदेव अच्छे विद्वान् थे, इन्होंने वि० संवत् ११२० से ११२८ तकके समयमें स्थानांगसूत्र आदि नौ ग्रन्थोंकी टीकायें लिखी थीं।

उक्त १०६–१०८ नम्बरकी गाथाओंमें 'जिनवल्लभ' शब्द तीन बार आया है और वह इतना स्पष्ट है कि उसका दूसरा अर्थ बिना ज़बर्दस्तीके बन ही नहीं सकता। निश्चयपूर्वक वह एक आचार्यकी प्रशंसा करनेके लिए आया है जो कि ग्रन्थकर्त्ताकी दृष्टिमें शिथिलाचारी चैत्यवासी न होकर आदर्श साधु या मुनि थे। उपदेश सि० रत्नमालामें ये गाथायें ज्योंकी त्यों हैं; परन्तु उनका अर्थ पं० भागचन्द्रजीने इस प्रकार किया है:—

" अबार भी कैई गुणवान् निर्दोष गुरु दीसें हैं । कैसे हैं ते, जिनराज समान हैं, नग्न मुद्राके धारी हैं । बहुरि केवल बाह्य लिंग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ही नाहीं । तो कैसे हैं, जिनराज ही हैं इष्ट जिनके, ऐसे हैं । भावार्थ–जिनभाषित धर्मके धारी हैं, केवल नग्न परमहंसादिककी ज्यों नाहीं । इहां कोई कहे जो अबार इस क्षेत्रमें मुनि तौ दीसते नाहीं, इहां कैसे कहे ? ताका उत्तर–जो तुमारी ही अपेक्षा तौ वचन नाहीं, वचन तौ सबनिकी अपेक्षा है, सो कोईनके प्रत्यक्ष होंयहीगे । जातें दक्षिण दिशामें अबार भी मुनिनका सद्भाव शास्त्रमें कह्या है ॥ १०७ ॥ जिनराज है इष्ट जिनके ऐसे निर्ग्रन्थ गुरुका उपदेश होत संतें भी कैई जीवनिके सम्यक्त हुलसायमान न होय है । अथवा सूर्यका तेज घूघूनिका अंधपना कैसे हरै ? नाहीं हरै ॥ ॥ १०८ ॥"

इसमें एक जगह 'जिनवल्लभ'का अर्थ "जिनराज' और शेष दो जगह 'जिनराज हैं इष्ट जिनके ऐसे' किया है; परन्तु साफ़ मालूम होता है कि ये अर्थ खींचतानके ज़बर्दस्ती किये गये हैं– वास्तवमें ठीक नहीं हैं ।

उक्त गाथाओंके सिवाय नीचे लिखी दो गाथाओंपर भी विचार कीजिए:—

सिरिधम्मदासगणिणा रइयं उवएसमालसिद्धंतं ।
सव्वे वि समण सद्धा मणंति पढंति पाढंति ॥ ९६ ॥
तं चेव केइ अहमा छलिया अहमाणमोहभूएण ।
किरियाए हीलंता हा हा दुक्खाइ ण गणंति ॥ ९७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इनका अर्थ यह है कि "श्रीधर्मदास गणिका रचा हुआ 'उपदेशमाला' नामका सिद्धान्त ग्रन्थ है जिसको सारे श्रमण (मुनि) और श्राद्ध (श्रावक) मानते हैं, पढ़ते हैं और पढ़ाते हैं; परन्तु उसकी भी अभिमान और मोह भूप (राजा) के द्वारा छले गये कितने ही अधम लोग अपनी क्रियामें—आचरणमें अवहेलना करते हैं और खेद है कि नरकादिके दुःखोंको कुछ भी नहीं गिनते हैं।"

ये धर्मदास गणि श्वेताम्बरसम्प्रदायमें बहुत ही प्रसिद्ध हैं और प्राचीन हैं। इनका बनाया हुआ उपदेशमाला ग्रन्थ सर्वत्र प्रसिद्ध और प्रचलित ग्रन्थ है। नेमिचन्द्र भण्डारी उक्त गाथाओंमें इसी ग्रन्थका उल्लेख करते हैं और खेद प्रकट करते हैं कि बहुतसे नीच साधु इतने माननीय ग्रन्थकी भी अवहेलना करते हैं—उसके अनुसार नहीं चलते हैं। इससे भी साफ़ मालूम होता है कि यह ग्रन्थ श्वेताम्बर सम्प्रदायका है।

पं० भागचन्द्रजीने इन गाथाओंका भी गोलमाल अर्थ किया है। वे कहते हैं—"श्रीधर्मदास आचार्य (?) करि उपदेशनि की है माला जा विषें ऐसा सिद्धान्त यहु रच्या है, ताहि सर्व ही मुनि वा श्रावक माने हैं पढ़े हैं पढ़ावे हैं। भावार्थ, यह उपदेश आगें धर्मदास आचार्यने रच्या है सो ही मैंने कह्या कछू कपोलकल्पित नाहीं ॥ ९६ ॥ बहुरि ताही शास्त्रकों केई अधम मिथ्यादृष्टी हैं ते आचरणविषें निन्दा करे हैं ॥९७॥" पर यह अर्थ ठीक नहीं है।

पं० भागचन्द्रजीकी उक्त ९६ वीं गाथाकी टीकासे मालूम होता है कि उन्होंने इसी गाथाका यथार्थ अभिप्राय न समझकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस पुस्तकका उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला, यह नामकरण किया है। उन्हें धर्मदासगणिकी उपदेशमालाका परिचय न रहा होगा।

ग्रन्थभरमें ये ही चार गाथायें ऐसी हैं जो इसको बहुत स्पष्टता और दृढताके साथ श्वेताम्बर ग्रन्थ सिद्ध कर सकती हैं। अन्यथा सारे ग्रन्थमें ऐसे साधारण और व्यापक उपदेश हैं कि उन्हें दिगम्बरसम्प्रदायवाले अपने शिथिलाचारी परिग्रहधारी भट्टारकोंके लिए और श्वेताम्बरसम्प्रदायके विधिमार्गानुयायी अपने चैत्यवासी शिथिलाचारी साधुओं तथा यतियोंके लिए समानरूपसे समझ सकते हैं। ऐसे शब्द कठिनाईसे मिलेंगे जो केवल श्वेताम्बर सम्प्रदाय पर ही लागू हो सकते हैं और जो हैं वे ऐसे हैं कि उनका अर्थ सहज ही बदला जा सकता है।

विक्रमकी बारहवीं शताब्दिके लगभग श्वेताम्बर सम्प्रदायके साधुओंमें इस तरहका शिथिलाचार बहुत बढ़ गया था जो कि—उक्त सम्प्रदायके सिद्धान्तानुसार निषिद्ध है। जहाँ तहाँ शिथिलाचारी साधुओंका ही जोरशोर था। उस समय श्रीजिनवल्लभसूरि आदि विद्वान् ऐसे लोगोंके विरुद्ध खड़े हुए और उन्होंने इस विषयका ज़बर्दस्त आन्दोलन उठाया। संघपट्टक, उसकी टीका, यह षष्ठीशतक आदि ग्रन्थ उसी आन्दोलनको जागृत रखनेके लिए लिखे गये थे। यह आन्दोलन कब तक ज़ारी रहा और उसका परिणाम क्या हुआ, इसका इतिहास श्वेताम्बर सम्प्रदायमें मौजूद है। अभिप्राय यह है कि षष्ठिशतक ग्रन्थ साधुओंके शिथिलाचारको दूर करनेके लिए ही लिखा गया था और इसी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कारण वह दिगम्बरसम्प्रदायके शिथिलाचारी भट्टारकों पर अच्छी तरह लागू होता है।

हम निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि पं० भागचन्द्रजी इस बातको जानते थे या नहीं कि यह ग्रन्थ श्वेताम्बर है। वे ओसवाल जातिके थे, इसलिए उनका श्वेताम्बर साहित्यसे थोड़ा बहुत परिचय अवश्य रहा होगा। संभव है कि श्वेताम्बरसम्प्रदायका जानकर भी उन्होंने इस ग्रन्थको दिगम्बरसम्प्रदायके लिए उस समय बहुत उपयोगी समझा हो; क्योंकि उन दिनों भट्टारकोंके शिथिलाचार और अत्याचार बहुत बढ़े हुए थे और इस लिए इसे अपने सम्प्रदायमें प्रचलित करनेके लिए यह भाषाटीका कर दी हो। साथ ही इस बातकी सावधानी रक्खी हो कि कोई इसे श्वेताम्बरसम्प्रदायका ग्रन्थ न समझे। वह समय ऐसा न था कि किसी सम्प्रदायका अच्छा ग्रन्थ भी दूसरे सम्प्रदायमें श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाय और लोग उसके उपदेशपर चलने लगें। इसमें सन्देह नहीं कि उनका उद्देश्य अच्छा था; परन्तु यदि उन्होंने जानबूझकर श्वेताम्बर ग्रन्थको अपना बनाया है तो एक दृष्टिसे अनुचित कार्य किया है। यह भी संभव है कि उन्हें यह मालूम ही न हो और दिगम्बर सम्प्रदायका ग्रन्थ समझकर ही भाषाटीका की हो। दो चार स्थलोंपर जो अर्थकी खींचातानी की गई है उसको छोड़कर मूलग्रन्थके पाठमें ज़रा भी परिवर्तन नहीं किया गया है—सारी गाथायें ज्योंकी त्यों हैं, इससे इस पिछले अनुमानकी कुछ कुछ पुष्टि होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि कोई कहे कि भागचन्दजीने दोनों सम्प्रदायोंके लाभके लिए मध्यस्थभावसे यह भाषाटीका की होगी, तो यह ठीक नहीं। क्योंकि कुछ गाथायें ऐसी हैं—उदाहरणार्थ ५ वीं और ३३ वीं गाथा—जिनकी टीकामें भट्टारकोंके साथ साथ श्वेताम्बरसाधुओंपर भी वस्त्रधारी होनेके कारण आक्रमण किया है और इससे साफ़ मालूम होता है कि उन्होंने केवल दिगम्बरियोंके उद्देश्यसे टीका रची है।

कुछ भी हो, पर यह निश्चय है कि उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला श्वेताम्बर-ग्रन्थ है और उसका वास्तविक नाम 'षष्ठिशतप्रकरण' है और इसी लिए दिगम्बरसम्प्रदायके किसी भी ग्रन्थमें न उसका कहीं उल्लेख है और न उसकी कोई गाथा उद्धृत की गई है। ६००—७०० वर्षका बना हुआ ग्रन्थ अबतक छुपा रहता, यह संभव नहीं जान पड़ता।

अस्तु! ग्रन्थ किसी सम्प्रदायका हो; परन्तु हमारी समझमें यह दोनों ही सम्प्रदायके कामकी चीज़ है और इस कारण इसका दोनों ही सम्प्रदायोंमें अधिकताके साथ प्रचार होना चाहिए। शिथिलाचारियोंकी दोनों ही सम्प्रदायोंमें कमी नहीं है। उनको राहपर लानेके लिए यह आवश्यक है कि हमारे श्रावक भाई गुरुके स्वरूपको जान जावें और इसके लिए उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला तथा षष्ठिशतककी दो दो चार चार हज़ार प्रतियाँ मुफ्तमें बाँटी जानी चाहिए।

आशा है कि विद्वान् पाठक इस लेखको ध्यानसे पढ़ेंगे और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि इस विषयमें मेरा कुछ भ्रम हो तो उसको दूर करनेका यत्न करेंगे। मैं यहाँ यह निवेदन अवश्य कर देना चाहता हूँ कि किसी सम्प्रदायकी निन्दा प्रशंसासे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है—सत्यकी खोज ही इस लेखका उद्देश्य है। (२८-९-१९)

जैनोंकी राजभक्ति और देशसेवा।

३-जोधपुरके भण्डारी।

जोधपुरके भण्डारी ओसवाल जातिके हैं। इनके यहाँ सदा मुत्सद्दीगरी अर्थात् नौकरी पेशा रहा है। मारवाड़ी समाजमें इनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। वर्त्तमानमें जोधपुरमें इनके लगभग तीन सौ घर हैं।

ये लोग अपनी उत्पत्ति अजमेरके चौहान घरानेसे बताते हैं। इनके पितामह राव लक्ष्मणने (लखमसी) अजमेरके घरानेसे पृथक् होकर नाडौलमें एक स्वतन्त्र राज्यकुल स्थापित किया था। इस कुलमें कितने ही राजा हुए। सबसे अन्तिम राजा अल्हणदेव था जिसने सन् ११६२ ईस्वीमें नाडौलके जैनमंदिरके सहायतार्थ बहुतसी सम्पत्ति अर्पण की थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि लाखा एक महापुरुष था। वीरता और देशभक्तिमें कोई उसका सानी न था। उसने अणहिलवाड़ासे कर और चित्तौरके राजासे खिराज वसूल किया था। अब भी जो कोई यात्री वहाँ जाता है, उसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नाडौलका किल्ल दिखाया जाता है। कहते हैं कि इसे लाखाने ही बनवाया था। लाखा बड़ा ही सौभाग्यशाली पुरुष था। उसके चौवीस पुत्ररत्न थे। उनमें से एकका नाम दादराव था। वही भण्डारी कुलका जन्मदाता है। कहा जाता है कि राजघरानेके भण्डारका प्रबन्ध दादरावके हाथमें था। इसी कारणसे इसकी सन्तान भण्डारीके नामसे प्रसिद्ध हो गई। विक्रम सम्वत् ११४९ अथवा ई० सन् ९९२ में यशोभद्रसूरिने दादरावको जैनधर्म ग्रहण कराया था और उसके कुलको ओसवाल जातिमें मिलाया था।

भण्डारी लोग मारवाड़में रावजोधाके समय (१४२७–८९ ई०) से रहते हैं जिसकी उन्होंने भारी सेवा की थी। अपने सेनापति नर भण्डारीकी अधीनतामें ये लोग जोधाके लिए मेवाड़-की सेनासे झिलवाड़ेमें लड़े थे और उन पर विजय प्राप्त की थी। जबसे ये लोग जोधपुरमें आये उसी समयसे दर्बारमें इनकी बड़ी मानता रही और ये बड़े बड़े उच्च पदोंपर नियुक्त रहे। संघवि-योंकी भाँति ये भी असि मसि, अर्थात् तलवार और कलमके धनी थे तथा जोधा घरानेके सच्चे भक्त और उपासक थे। ये लोग अब भी राज्यके सच्चे सेवक समझे जाते हैं। अब हम पाठकोंको उन भण्डारियोंका संक्षिप्त परिचय कराते हैं जिन्होंने युद्धमें नाम पैदा किया था।

१ रघुनाथ। यह महाराजा अजीतसिंहके समयमें (१६८०–१७२५ ईस्वी) हुआ। महाराजने इसे दीवानके पद पर नियुक्त करके राज्यसम्बन्धी सम्पूर्ण कार्योंको इसे सौंप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिया था। राज्यप्रबन्ध और सिपाहगिरी दोनों कार्योंमें इसका अनुभव बहुत बढ़ा चढ़ा था। कर्नल वाल्टर साहबका कथन है कि जब महाराजा अजीतसिंह देहलीमें विराजमान थे, तब रघुनाथ भण्डारीने अपने स्वामीके नामसे मारवाड़में कितने ही वर्ष शासन किया था। यह बात नीचे लिखे हुए पदसे भी प्रगट होती है जो जनसाधारणमें बड़ी बहुत प्रसिद्ध है।

"अजि दिली रो पतशो राजा तौ रघुनाथ।"

अर्थात् जब अजीतसिंह दिल्ली पर शासन कर रहे थे, उस समय रघुनाथ भण्डारी मारवाड़ पर राज्य कर रहा था।

भण्डारी खिमसी। यह भी महाराजा अजीतसिंहके समयमें दीवान पदपर नियुक्त था। इसने दिल्लीके अधिपतिसे गुजरातकी सूबेदारीकी सनद प्राप्त कर ली थी। मारवाड़का इतिहास इस बातका साक्षी है कि भण्डारी खिमसीने जज़िया करको—जिसे औरङ्गजेबने पुनः हिन्दुओंपर लगा दिया था—बंद करा दिया था। यह यश भण्डारी खिमसीको ही प्राप्त है।

३ भण्डारीविजय। महाराजा अजीतसिंहने इसे पाटनका सूबेदार नियत किया था।

४ रतनचन्द। यह महाराजा अभयसिंहका—जिन्होंने सन् १७२९ से १७९० ईस्वी तक राज्य किया—बड़ा भारी सरदार था। जब अभयसिंहने बीकानेर पर आक्रमण किया था उस समय रतनचन्द ही मारवाड़सनोंका नायक था। इसने बड़ी वीरतासे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शत्रुका सामना किया; परन्तु शोक है कि वह लौटते समय मार डाला गया।

५ गंगाराम। यह विजयसिंहके समय (सन् १७९२–९२ ईस्वी) में हुआ। यह केवल राजनीतिज्ञ ही नहीं था बरन् बहादुर सिपाही भी था। यह मेड़ताके युद्धमें भी गया था जो सन् १७९० ईस्वीमें मरहठों और राठौरोंके बीचमें हुआ था।

६ लक्ष्मीचन्द। यह महाराजा मानसिंहके राज्यकालमें (सन् १८०३–४३) दीवान पद पर आसीन रहा। इसको जागीरमें एक गाँव मिला था जिसकी आय २००० रुपयोंके लगभग थी।

७ बहादुरमल। यह महाराजा तख्तसिंहके समयमें (सन् १८४३–७३) हुआ। सम्भवतया मुत्सद्दीवंशमें यह सबसे अन्तिम था। इसका महाराजाके ऊपर ऐसा प्रभाव पड़ा हुआ था कि यथार्थमें लोग इसीको मारवाड़का राजा मानते थे। यह बात इसकी कीर्तिको और भी बढ़ाती है कि राजा और प्रजा दोनोंकी भलाई करनेमें जिनका प्रेम इसकी नस नसमें भरा हुआ था, इसने कोई भी बात उठा नहीं रक्खी। इसी कारणसे वहाँकी प्रजा इससे बहुत ही प्रसन्न और आह्लादित रहती थी। नमकके ठेकेके काममें इसने जो कुछ सेवा की थी उसके लिए मारवाड़ी प्रजा चिरकाल तक इसका आभार मानती रहेगी। सन् १८८५ ईस्वीमें सत्तर वर्षकी अवस्थामें इसका स्वर्गवास हो गया।

८ किशनमल। यह महाराजा सरदारसिंहसे पहले राजा तथा महाराजा सरदारसिंहके राज्यके प्रारम्भमें कोषाध्यक्ष था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यह आर्थिक विषयोंमें बड़ा निपुण था। इसने मारवाड़के कोषकी नींव बहुत पक्की डाल दी थी। निम्नलिखित पदसे इस बातका पता लगता है कि मारवाड़के आदमी इसका कितना आदर करते थे—

" बक फटत बैरियां, हक जशरा होय।
सुत बहादर रे सिरे, किशना जैसा न कोय "॥

भण्डारियोंके रीति रिवाज अन्य ओसवालोंके समान ही हैं। उनकी आसपूरा देवीका मन्दिर नाडौलमें है जहाँपर वर्षमें दो बार मेला लगता है। कहा जाता है कि जब लाखाके कोई सन्तानोत्पत्ति न हुई तब उसने देवीसे प्रार्थना की कि हे माता मुझे एक पुत्र दे। देवीने उसकी इस प्रार्थनापर प्रसन्न होकर उसको चौबीस पुत्ररत्न दिये। भण्डारी लोग कभी काली गाय, काली बकरी अथवा काली भैंसको नहीं खरीदते। हाँ, यदि कोई भेंटमें दे तो बड़े हर्षसे ले लेते हैं।

भण्डारी लोग वाणिज्यकी अपेक्षा राज्यसेवाको पसन्द करते हैं। दीपावत, मानावत, लुनावत, निवावत इत्यादि उनकी भी कितनी ही जातियाँ हैं। इनमें आपसमें शादी विवाह नहीं होते। भण्डारियोंकी स्त्रियोंमें बड़ा परदा है। अन्य ओसवालोंकी भाँति वे मस्तक पर 'बोर' आभूषणको नहीं पहनतीं।

—नाथूराम जैन।

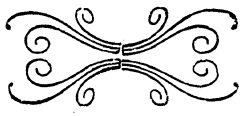

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अंजना।

(अंक ५, ६ से आगे।)

(५४)

थोड़े दिन तक तो परिजनने,
पाया नहीं यही संवाद।
नहीं अंजनाको छूता है,
पवनकुमार धार सुविषाद॥

(५५)

पर धीरे धीरे यह सबको,
जान पड़ा दुख है भारी।
सब सुखयारी समझें जिसको,
वही अंजना दुखियारी॥

(५६)

रहती रात दिवस चिन्तामें,
कब देंगे दर्शन स्वामी।
कब होगी पूरी अभिलाषा,
कब पाऊँगी सुख नामी॥

(५७)

रोती कभी कभी दुख पाती,
लेती कभी दीर्घ निश्वास।
अछताती पछताती दुखिया,
तज देती थी जीवन-आश॥

(५८)

बरसों बीत गये दुखियाको,
पाये नहिं नीके दर्शन।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छलिया कपटिन पगली कहते,
रुका पवनजयका नहिं मन ॥

(५९)

लाख लाख तक़लीफ़ उठाती,
तरुणी हा हा खाती थी ।
नहीं पवनजयके मनको वह,
तोभी पिघला पाती थी ॥

(६०)

मन था या अनघड़ पत्थर था,
लोहा था या वज्जर था ।
प्रेमभिखारिन परम सुन्दरी,
नारीको न जहाँ स्थल था ॥

(६१)

बरसों बीत गये ऐसे ही,
स्त्रीको दुख पाते पाते ।
तोभी रुके न पतिके जीमें,
दुष्ट भाव आते आते ॥

(६२)

इतनेमें प्रल्हाद भूप पर,
पत्र लंकपतिका आया ।
सैन्यसहित सज रणमें शामिल,
होनेको था बुलवाया ॥

(६३)

कहा पवनजयने पढ़ उसको,
पूज्य पिता मैं जाऊँगा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्षत्रियसुत कैसे होते हैं,
रणमें यह दिखलाऊँगा ॥

(६४)

नृप रावणके सब रिपुओंको,
दल मल मार भगाऊँगा ।
अपना अपने कुलका गौरव,
जगमें पूर्ण जमाऊँगा ॥

(६५)

ऐसे विनती कर आज्ञा ले,
सजा सैन्य चढ़ चला कुमार ।
मूर्तिमान जा रहा वीररस,
मानों लिए ढाल तलवार ॥

(६६)

लेकर मंगल द्रव्य मनोरम,
पतिव्रता सन्मुख आई ।
सती अंजना, पर वह पतिसे,
तिरस्कार भारी पाई—॥

(६७)

चली गई दुखिया महलोंमें,
व्याकुल करने लगी विचार ।
देखें जय पाकर आते हैं,
कब तक मेरे प्राणाधार ॥

(६८)

दिन भर चल सेना जा ठहरी,
मानसरोवरके शुचि तीर ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लगे टहलने ले प्रहस्तको,
तीरों तीर पवनजय वीर ॥

(६९)

वहाँ नजर आया चकवेको,
झपट ले गया पक्षी बाज ।
चकवी तड़प तड़प जी देती,
करती हुई आर्त आवाज ॥

(७०)

उड़ती कभी कभी भूतल पर
गिरती पड़ती चलती थी ।
अपनी छायाको जलमें लख,
चकवा जान लपकती थी ॥

(७१)

चकवा कहाँ कहाँ चकवी थी,
चकवा तो तज गया जहान ।
चकवीका दुख लखा न जावे,
थी संकटमें उसकी जान ॥

(७२)

इस घटनासे पवनंजयके,
दिलपर असर पड़ा भारी ।
लगा कोसने अपनेको ही,
मैं हूँ दुष्ट बड़ा भारी ॥

(७३)

मम वियोगमें मेरी प्यारी,
क्या क्या दुख न उठाती है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस चकवीसे भी वह ज्यादा
बार बार बिलखाती है ॥

(७४)

हूँ हत्यारा, हूँ मैं पापी,
बड़ा घातकी हूँ मैं क्रूर।
जो अबलाको दुख देनेको,
रहता हूँ उससे अति दूर॥

(७५)

औरोंसे बातें करता हूँ,
घुल घुल कर प्यारी प्यारी।
पर अपनी सच्ची प्यारीको,
कहता हूँ दुष्टा नारी॥

(७६)

निजको धिक् धिक् कह पछताता,
चला गया प्यारीके पास।
लगा माँगने क्षमा दीन हो,
मनमें होता हुआ उदास॥

(७७)

चरणोंमें गिर पड़ी अंजना,
मेरे जीवन, मेरे प्रान।
मेरे कर्मोंका दूषण था,
नहीं आपका दोष सुजान॥

(७८)

मेरे मोती, मेरे माणिक,
चन्दा हो मेरे प्रभु आप।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मेरे सब शृंगार आप हो,
मेरे सब भूषण हो आप ॥

(७९)

मैं इन चरणोंकी दासी हूँ,
मेरे हो प्रभु प्राणाधार ।
जीवनधन हो आनँदघन हो,
सरबस हो मेरे सरदार ॥

(८०)

भूल चूक अपराध हुए हों,
मुझसे उन्हें क्षमा करिए ॥
हूँ अबला अनजान मूढ़ मैं,
मेरे दोष न हिय धरिए ॥

(८१)

सुनी अंजनाकी मृदुवाणी,
हुआ पवनजय बड़ा प्रसन्न ।
हँसी खुशीमें समय बिताया,
मा बापोंसे रह प्रच्छन्न ॥

(८२)

वीरवेशमें सजा हुआ था ।
जाना था रणको चढ़कर ।
पीछा जाने लगा सैन्यमें,
तभी अंजनाने नमकर- ॥

(८३)

' स्वामीकी जय हो जय हो ' कह,
जय-कंकण बाँधा करमें ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

"तेज नाथका ग्रहण किया है"
और कहा—"अपने उरमें"॥

(८४)

"इसी लिए स्वामी बिनती है,
निज मुद्रा मुझको दीजे।
रिपुको जीत नाम पा जल्दी,
दासीकी फिर सुध लीजे॥"

(८५)

दासी नहीं सुन्दरी तू है,
मेरे प्राणोंकी प्यारी।
चिन्ता न कर शीघ्र आता हूँ,
रिपुबल मर्दन कर प्यारी॥

(८६)

यों कह निज मुद्रा दे खुश हो,
गया पवनजय निज दलमें।
इधर अंजना खुशी हुई अति,
पतिप्रेम पाकर दिलमें॥

(८७)

थोड़े ही दिन भीतर बातें,
लगीं फैलने चारों ओर।
हुई अंजना गर्भवती है,
पाप किया इसने अति घोर॥

(८८)

कोई कहने लगा "अंजना
बड़ी सती थी कहलाती।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पर, ऐसी है, इसी लिए तो,
नहीं पवनजयको भाती ॥ "

(८९)

कहा किसीने " वाह वाह जी,
क्या ऐसा हो सकता है ?
बड़ी सुशीला है वह, उसके
लिए व्यर्थ जग बकता है ॥ "

(९०)

" तुम हो भोले भाले भाई,
त्रियाचरित तुम क्यो जानो ।
जो छल कपट अंजना करती,
कहो उन्हें तुम क्या जानो ॥"

(९१)

धीरे धीरे ऐसी बातें,
पहुँचीं राजा रानीको ।
उनको हुआ बड़ा भारी दुख,
हो दुख क्यों नहिं मानीको !

(९२)

रानी केतुमती झट आई,
अपनी पुत्रवधूके पास ।
गर्भवती जब उसको देखी,
लगी डालने तब निश्वास ॥

(९३)

कोप अंजना पर कर भारी,
उसको दिया तुरन्त निकाल ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथ्य कथन, मुद्रा दिखलाना,
उसका इसने माना जाल।

(९४)

गई कोसती हुई गर्भको,
दुखिया पापोंकी मारी।
अपने मातापिताके घरपर,
तिरस्कार पाई भारी॥

(९५)

पा अपमान चली जंगलमें,
निराधार दुखिया बाला।
दुख-सुख-संगातिन थी सँगमें,
प्यारी सखि वसन्तमाला॥

(९६)

प्रथम गर्भिणी, फिर वह वन-महि,
चला न कुछ भी जाता था।
कठिनाईसे राम राम कर
कुछ कुछ पद उठ पाता था॥

(९७)

धीरे धीरे शैल-गुफातक
पहुँची, पहुँची मुनिके पास।
कुशल पूछ वचनामृत सुनकर
मनमें बँधा इसे विश्वास॥

(९८)

चैत्र शुक्ल अष्टमी सुतिथिको
बीती जब थी आधी रात।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुआ अंजनाके बलशाली,
तेजस्वी बालक दृढगात॥

(९९)

इतनेमें ही सिंहगर्जना,
एकाएक हुई भारी।
प्रतिधुनिसे सारे जंगलमें
कोलाहल छाया भारी॥

(१००)

चिल्ला उठी अंजना इससे,
भय खाकर अपने मनमें।
इतनेमें ही व्योमयान इक,
आया इसके ढिग पलमें॥

(१०१)

उससे उतरे नृप प्रतिसूरज,
पूछा उनने इसका हाल।
बातें कर, जाना यह तो है
सती अंजना मेरी बाल॥

(१०२)

अपना परिचय देकर बोले,
तव मामा प्रतिसूरज हूँ।
बेटी, घरको चलो, चलें अब,
चलनेको मैं उद्यत हूँ॥

(१०३)

'अच्छा चलिए' कह सब बैठे,
जल्दी चलने लगा विमान॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रस्तेके भीतर हाथोंसे,
छिटक पड़ा बालक बलवान ॥
(१०४)
हा हा कर सब नीचे आये,
देखा तो खुश था बालक।
चोट न उसको कुछ आई थी,
फूट गया गिरिपत्थरतक ॥
(१०५)
बच्चेको कर प्यार साथ ले,
प्रतिसूरज निजघर आया।
सती अंजनाने निज शिशुका,
यहाँ आय आनँद पाया ॥
(१०६)
आनँद मना रही थी कुछ कुछ,
पर यह क्या आया संवाद।
जिसको सुन हो गई अंजना,
मूर्छित मनमें पाय विषाद ॥
(१०७)
" विजयश्रीको पाकर आये,
वीर पवनजय निज घरपर।
नहीं अंजनाको जब पाई,
चले गये वन, घर तजकर ॥ "
(१०८)
अपनी भागिनीकी तनयाको,
प्रतिसूरजने किया सचेत।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहा अंजना मत घबरा तू
जाता हूँ मैं खोजन हेत ॥
(१०९)
होंगे जहाँ वहाँसे उनको,
ले आऊँगा तेरे पास ।
चिन्ता न कर ज़रा भी मनमें,
प्रभुपर पूरा रख विश्वास ॥
(११०)
यों कहकर प्रतिसूरज नृपने,
आदितपुरको किया प्रयाण ।
केतुमती प्रह्लाद भूपको,
समाचार जा दिये महान ॥
(१११)
सती अंजना मेरे घर है,
हुआ पुत्र उसके शुचिगात ।
पर वह पतिके दर्शनको है,
अकुलाती रहती दिनरात ॥
(११२)
दीनवदन राजा रानीने,
कहा, आपका है उपकार ।
भ्रममें पड़ हमने ही उसका,
किया बड़ा ही है अपकार ॥
(११३)
वह जीती है, पुत्र हुआ है,
अच्छे हैं सब, अच्छा है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिल जावे अब पवन हमारा,
तब यह जीवन अच्छा है ॥

(११४)

बार बार ऐसा कहकहकर,
पछताते थे नृप प्रह्लाद ।
केतुमती आँसू बरसाती,
रोती थी कर बातें याद ॥

(११५)

हाय शुद्धशीलाको हमने,
घरके बाहर दिया निकाल ।
अपने पैरों आप कुल्हाड़ी,
मारी किसको कहिए हाल ॥

(११६)

समझा बुझा इन्हें प्रतिसूरज,
कहने लगा करो मत देर ।
खोज़ लगावें भलीभाँतिसे,
लावें शीघ्र पवनको हेर ॥

(११७)

सभी चले नृप महेन्द्रको भी,
अपने सँगमें बुलवाया ।
खोजा जहाँ तहाँ आखिरमें,
सघन गहन वनमें पाया ॥

(११८)

ध्यान लगाकर उस जंगलमें,
बैठा था निश्चल होकर ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रिये प्रिये मनमें रटता था,
दिखता था कोरा पंजर ॥

(११९)

कहा पिताने प्यारे बेटा,
उठो उठो क्या करते हो।
माता पिता श्वसुर सब जनका,
दुख क्यों नहिं उठ हरते हो ॥

(१२०)

" प्यारी, प्यारी, प्रिये अंजना,
आ, मिल, " सहसा बोल उठा।
पर जब देखा पूज्य पिताको,
सकुचाया नत होय उठा ॥

(१२१)

माता देखी ससुरा देखा,
मामी-ससुरा भी देखा।
देखा सब कुछ पर न प्रियाको
इधर उधर झाँका देखा ॥

(१२२)

प्रतिसूरजने कहा " कृपाकर,
सब मेरे घरको चलिए।
वहाँ अंजना बाट देखती—
होगी, उसका दुख हरिए ॥"

(१२३)

हनूद्वीपको सभी गये तब,
हुआ वहाँ पर मँगलाचार।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिली अंजना निज स्वामीसे
सुखी हुआ सारा परिवार ॥

(१२४)

बेटा पुत्रवधू पोतेको,
पाकर केतुमती-प्रह्लाद ।
कविकी कलम न कह सकती है,
कैसा हुआ उन्हें आह्लाद ॥

(१२५)

प्रतिसूरज त्यों महेन्द्र नृपके,
आनँदका कुछ रहा न पार ।
सती अंजनाके सतीत्वको,
मान गया सारा संसार ॥

(१२६)

आनँदमंगल छाया सबमें,
हुआ प्रशंसित शीलसिंगार ।
सती अंजनाका अति सुंदर,
छाया जगमें जयजयकार ॥

—भँवरलाल सेठी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शान्ति और सुखकी वृद्धि करनेके नियम।

१ सम्भव है कि हमको प्रति दिवस दुःख तथा निराशाका सामना करना पड़े, इस लिए उत्तम होगा कि, हम उसके लिए पहलेहीसे तैयार रहें।

२ सब बातोंमें पूर्ण कोई भी नहीं है, अतएव बहुत पानेकी आशा मत करो।

३ प्रत्येक पुरुषके स्वभावको अच्छी तरह जाँचो ताकि उसे समझकर तुम उसका बन्धेज कर सको।

४ यदि तुम्हारा स्वभाव चिड़चिड़ा है तो बोलनेके लिए शीघ्रता मत करो; यदि तुम क्रोधमें होओ तो किसी कार्यके करनेमें शीघ्रता मत करो।

५ दूसरोंको सुखी बनानेमें अपनी शक्तिभर प्रयत्न करो।

६ जीवनको प्रसन्नताकी दृष्टिसे देखो।

७ अपनेसे जो बड़े हों उनसे शिष्टतापूर्वक और अपनेसे छोटोंसे नम्रतापूर्वक वर्ताव करो। भृत्यों (नौकरों) से दयालुतासे बोलो।

८ जब किसीकी स्तुति करना हो तो सबके समक्ष करो और दोष ढूँढ़ना हो तो अकेलेमें ढूँढ़ो।

९ किसीकी प्रशंसा तो जब कर सको तबही करो; किन्तु किसीको दोष केवल उसी समय दो जब बहुत आवश्यक हो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० नम्रतासे दिया गया उत्तर क्रोधकी आँधीको भी छूमन्तर कर देता है।

११ यदि किसी पर क्रोधित होनेका मौका आवे तो स्मरण रक्खो कि तुमसे स्वयम् भी कभी भूल हुई होगी।

१२ सब आनन्दोंमें दूसरोंको पहले सम्मिलित करो।

१३ जब कभी तुमसे हो सके अच्छे सञ्चालनका श्रेय दूसरोंको दो।

भैय्यालाल जैन।

द्वेष।

द्वेष एक बड़भारी अवगुण है। जिस पुरुषमें यह अवगुण हो उसे पशुसे भी गया बीता जानना चाहिए। इसका अर्थ पूर्ण रीतिसे समझना हो तो एक उदार प्रेमी और एक नीच द्वेष रखनेवाले मनुष्यके मुँहकी ओर देखो। एकके मुखपर तुमको उज्ज्वल आनन्द दृष्टिगोचर होगा, दूसरेके मुँहपर गुर्राते हुए कुत्तेके समान क्रूरता नजर पड़ेगी। एक कुत्ता भी द्वेष रखनेवाले पुरुषसे उत्तम है; क्योंकि पशुओंमें तो द्वेष, वैर भँजानेके समयतक ही रहता है-वह उनके मनमें सर्वदा घुला नहीं करता, किन्तु मनुष्यके हृदयमें तो द्वेष, गहरेसे गहरे भागमें दुष्ट कीड़ेके समान प्रवेश करके उसकी उत्तमताका नाश कर देता है। द्वेष रखनेवाला पुरुष, दूसरेका तो नुकसान जब कर सकता है, तब

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करता है किन्तु प्रथम तो वह अपनी ही हानि करता है। जबतक वह द्वेष रखता है तबतक उसका मन क्रोध और चिन्ताओंसे ग्रसित रहता है। उसका चित्त प्रफुल्लता क्या है, इसको तो कभी जानता ही नहीं है। सबको प्रेम भरी मीठी दृष्टिसे देखनेमें कितना आनन्द भरा है, इसका उसे स्वप्न भी नहीं होता।

पशु तो अपने स्वार्थसाधनके लिए ही कोई अनुचित कार्य करता है और ऐसा करनेसे उसे जो रोकता है उसे हानि पहुँचाता है किन्तु द्वेष रखनेवाला पुरुष तो, स्वार्थ न रहनेपर भी, "मुझे अमुक मनुष्यका नुकसान करना है" इतना विचार आने मात्रसे उसकी हानि करनेको तत्पर हो जाता है और ऐसा करनेमें आनन्द मानता है।

यह तो हुई द्वेष रखनेवाले पुरुषकी बात, अब एक पवित्र हृदयवाले व्यक्तिका भी उदाहरण दिया जाता है जिससे द्वेष और उदारताका अन्तर भलीभाँति समझमें आ जावे।

बौद्धधर्मके एक ग्रंथमें लिखा है कि काशीके एक ब्रह्मदत्त नामक राजाने कौशलदेशके राजा और रानीको एक समय बड़ी क्रूरतासे मार डाला और उनका राज्य ले लिया। मरते समय कौशल्य राजा अपने पुत्रको यह उपदेश देता गया कि, "भाई! शत्रुताकी ओषधि शत्रुता नहीं है किन्तु प्रेम है।" मातापिताविहीन राजपुत्र बहुत समय तक जंगलोंमें भटकता फिरा। अन्तमें वह ब्रह्मदत्तकी घुड़सारमें नौकर हो गया। एक बार वह घुड़सारमें बैठा बैठा बाँसुरी बजा रहा था। उसे सुनकर राजा बहुत प्रसन्न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हुआ और उसने उसको अपनी अर्दलीमें रख लिया। राजाने उसे नहीं पहचाना। इसके पश्चात् राजा उसको अपने साथ लेकर आखेटको गया। वहाँ बहुत थक जानेके कारण, एक वृक्षकी छायामें राजा उस युवाकी गोदमें सिर रखके सो गया। पास ही तलवार रक्खी थी, उसे खींचकर राजपुत्रने विचारा कि राजाका सिर उतार कर, अपने पिताके वैरका बदला लूँ। किन्तु उसी समय, उसे अपने पिताका अन्त समयका दिया हुआ उपदेश याद आया। थोड़ी देरमें राजा जागा और उससे राजपुत्रने अपना सारा वृतान्त कह दिया। राजा उसका क्षमाका गुण देख कर दंग रह गया और उसने उसके पिताका राज्य उसे वापिस दे दिया।

उदारहृदय मनुष्य किसीसे बैर नहीं करता और जो उसके साथ बुराई करता है उसका बदला वह भलाईमें देता है। सच्ची शूरता (बहादुरी) बैर करनेमें नहीं है किन्तु क्षमा करनेमें है। क्षमा वीर पुरुषका भूषण है। *

भैय्यालाल जैन।

* गुजराती पाँचवीं पुस्तकसे अनुवादित।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इतिहास प्रसङ्ग ।

(२७)

नीतिसारके कर्त्ता इन्द्रनन्दि ।

'इन्द्रनन्दि' नामके धारक अनेक आचार्य और भट्टारक हो गये हैं जिन सबके समयादिकका प्रायः अभीतक कोई ठीक निश्चय नहीं हुआ। 'नीतिसार' अथवा 'नीतिसारसमुच्चय' नामक ग्रंथके कर्त्ता भी एक 'इन्द्रनन्दि' हुए हैं। उनका भी समय अभीतक अनिश्चित है। परन्तु वे सोमदेवाचार्यके पीछे ज़रूर हुए हैं। क्योंकि उन्होंने, उक्त नीतिसारमें, **जिनसेन गुणभद्रादिक** उन आचार्योंका उल्लेख करते हुए जिनके रचेहुए शास्त्र, उनकी दृष्टिमें, माने जानेके योग्य हैं, '**सोमदेव**' का भी नामोल्लेख किया है। यथाः—

"अकलंको महाप्राज्ञः सोमदेवो विदाम्बरः।
प्रभाचंद्रो नेमिचंद्र इत्यादिमुनिसत्तमैः ॥ ७० ॥"

'सोमदेव' नामके दो विद्वान् आचार्य हुए हैं। एक 'यशस्तिलक'के कर्त्ता और दूसरे 'शब्दार्णवचंद्रिका' के रचयिता। पहले विक्रमकी ११ वीं शताब्दीमें और दूसरे १३ वीं शताब्दीमें हुए हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उक्त **इन्द्रनन्दि** यशस्तिलकके कर्त्ताके बाद हुए हैं और बहुत संभव है कि वे शब्दार्णवचंद्रिकाके रचयिताके भी पीछे हुए हों। क्योंकि उनके नीतिसारसे समयकी जिस स्थितिका बोध होता है वह उन्हें १३ वीं शताब्दीमें या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उससे भी कुछ पीछे ले जाती है । उनके समयमें भट्टारकी प्रवाह बह चुका था । वे स्वयं भट्टारकोंके सम्प्रदायमें थे, या कमसे कम भट्टारकोंकी धनादिक ग्रहण करने और दीनदुःखित जीवोंको, गृहस्थोंकी तरह, भोजनादिक बाँटनेकी प्रवृत्तिको अनुचित नहीं समझते थे । यही कारण है कि उन्होंने, अपने नीतिसारमें, जैनमुनियोंके लिए उसका विधान किया है । यथाः—

" **मध्याह्ने दुःखितान्दीनान् भोजनादिभिरादरात् ।**
अनुग्रहन्यतिः संघैः पूजनीयो भवेत्सदा ॥ ४२ ॥
क्वचित्कालानुसारेण सूरिर्द्रव्यमुपाहरेत् ।
संघपुस्तकवृद्धचर्थमयाचितमथाल्पकम् ॥ ८६ ॥ "

दूसरे श्लोकमें द्रव्यके ' **अयाचितम्** ' और ' **अल्पकम्** ' विशेषण करनेसे तथा ' **क्वचित्कालानुसारेण** ' यह पद देनेसे ऐसा भी ध्वनित होता है कि इन्द्रनन्दिके समयमें भट्टारकोंकी धनादिक ग्रहण करनेकी प्रवृत्ति कुछ बढ़ चली थी, उसे कम करनेके लिए ही शायद उन्होंने यह नियम बनाया है । इस ग्रंथमें भट्टारकका लक्षण भी दिया है जिसमें भट्टारकके लिए विद्वान्, उदार और प्रभावशाली होनेके सिवाय दिगम्बर मुनिपनेका कोई भी विशेष चिह्न नहीं रक्खा है ।

(२८)

वादिराज और कविचंद्रिका। *

एकीभावस्तोत्र और पार्श्वनाथचरित आदिके कर्ता **श्रीवादि-**

* जैनहितैषी भाग ६ अंक ११–१२ में प्रकाशित ' ग्रन्थविवरणसंग्रह ' शीर्षक लेखमें भी इन वादिराजका और उनकी कविचन्द्रिकाका परिचय दिया जा चुका है । —सम्पादक ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजसूरिसे भिन्न एक दूसरे 'वादिराज' नामके कवि भी हुए हैं जिन्होंने 'वाग्भटालंकार' नामक ग्रंथपर 'कविचंद्रिका' नामकी संस्कृत टीका लिखी हैं। वादिराजसूरिका समय विक्रमकी ११ वीं शताब्दी है और यह टीका संवत् १७२९ में बनकर समाप्त हुई है। जैसा कि इसकी प्रशस्तिसे मालूम होता है:—

"संवत्सरे निधिद्वगश्वशशाङ्कयुक्ते,
दीपोत्सवाख्यदिवसे सगुरौ सचित्रे।
लग्नेऽलिनाम्नि च समाप गिरः प्रसादात्,
सद्वादिराजरचिता कविचंद्रिकेयम्" ॥ १ ॥

ये **वादिराज** कवि खाण्डिल्यवंश (खण्डेलवाल) में उत्पन्न हुए पोमराज श्रेष्ठिके पुत्र थे और तक्षक नगरीके राजा राजसिंहके यहाँ किसी पदपर नियुक्त थे। उन्हींकी सेवामें अपना गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करते हुए कविने यह टीका लिखी है, ऐसा प्रशस्तिके शेष पद्योंसे जान पड़ता है। इस टीकामें कविने अपने आपको **धनंजय, आशाधर** और **वाग्भट**की जोड़का विद्वान् बतलाया है। यथा:—

"धनंजयाशाधरवाग्भटानां धत्ते पदं सम्प्रति वादिराजः।
खाण्डिल्यवंशोद्भवपोमसूनुर्जिनोक्तिपीयूषसुतृप्तचित्तः ॥ ३ ॥"

(२९)

चन्द्रकीर्ति और पार्श्वनाथपुराण।

'**चंद्रकीर्ति**' नामके एक भट्टारक हो गये हैं, जिन्होंने विक्रमसंवत् १६९७ में 'पार्श्वनाथपुराण' की रचना की है। यह पुराण उन्होंने देवगिरि नामक मनोहरपुरके पार्श्वनाथ चैत्यालयमें बनाकर समाप्त किया है। यथा:—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

" श्रीमद्देवगिरौ मनोहरपुरे श्रीपार्श्वनाथालये,
वर्षेऽब्धीषुरसैकमेय इह वै श्रीविक्रमाधीशितुः ।
सप्तम्यां गुरुवासरे श्रवणभे वैशाख मासे सिते,
पार्श्वाधीशपुराणमुत्तममिदं पर्याप्तमेवोत्तरम् ॥ ८५ ॥ "

इस पुराणकी श्लोकसंख्या ग्रंथके अन्तिम पद्य (नं० ८७) में २७१० प्रगट की गई है । कविने यह ग्रंथ **श्रीगुणभद्राचार्यके** 'उत्तरपुराण' को देखकर लिखा है । ऐसा इस ग्रंथकी आदिमें कविकी प्रतिज्ञासे मालूम होता है । ग्रंथमें, ग्रंथकर्ताने अपनी गुरु-परम्परा काष्ठासंघके प्रधान गच्छ 'नन्दीतट' के मुकुटमणि श्री**रामसेना**चार्यसे प्रारंभ की है, अन्तमें अपनेको 'श्रीभूषणसूरि' का शिष्य बतलाया है और उनके नामका प्रायः प्रत्येक सर्गके अन्तिमकाव्योंमें स्मरण किया है । **रामसेन**के अन्वय (वंशपरम्परा) में **धर्मसेन** नामके आचार्य हुए । फिर उनके पट्टपर क्रमशः **विमलसेन, विशालकीर्ति, विश्वसेन, विद्याभूषण** और **श्रीभूषण**का प्रतिष्ठित होना लिखा है ।

सकलकीर्ति और सुरेन्द्रकीर्तिका समय ।

पार्श्वनाथपुराणकी जिस प्रतिपरसे यह नोट लिखा जाता है वह संवत् १८२० की लिखी हुई है और उसे भट्टारक **सुरेन्द्रकीर्ति**के पट्टपर प्रतिष्ठित होनेवाले **सकलकीर्ति** नामके भट्टारकने अपने पढ़नेके लिये सुरम्यपुरमें लिखाया है । इससे सकलकीर्ति और सुरेन्द्रकीर्ति भट्टारकोंका समय भी मालूम हो जाता है । जैनसमाजमें सकलकीर्तिके नामसे सैंकड़ों ग्रंथ प्रचलित हैं । परन्तु इस नामके अनेक आचार्य और भट्टारक होगये हैं । कौन ग्रंथ कौनसे सकलकीर्तिका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बनाया हुआ है और कब बना है, इसका निर्णय होनेकी ज़रूरत है। विद्वानोंको इस विषयमें प्रयत्न करना चाहिए।

(३०)

भद्रबाहुका समाधि-स्थान।

मिस्टर बी. लेविस **राइस** साहबने अपनी 'इन्स्क्रिप्शन्स ऐट श्रवणबेल्गोल' नामक पुस्तककी भूमिकामें, अनेक प्राचीन शिलालेखों और 'राजावलीकथे' आदिके आधारपर, अन्तिमश्रुतकेवली श्री**भद्रबाहु**स्वामिका समाधि-स्थान कर्णाटकदेशके अन्तर्गत श्रवणबेल्गोल नामक नगरके 'चंद्रगिरि' पर्वतकी, जिसे 'कटवप्र' और 'कल्बुप्पु' भी कहते हैं, एक गुफामें बतलाया है। साधारण जनताका भी ऐसा ही विश्वास है। इसी लिए वह स्थान एक तीर्थस्थान माना जाता है। हरसाल सैकड़ों यात्री उस स्थानकी वंदनादिक करनेके लिए वहाँ जाते हैं। इन्हीं सब बातोंको लेकर '**जैनसिद्धान्तभास्कर**' ने भी अपनी किरणोंद्वारा उसे प्रकाशित किया है, अन्यथा उसके माननीय '**भद्रबाहुचरित्र**' में इसका कोई उल्लेख नहीं है। चरित्रलेखक **रत्ननन्दि**ने इस विषयमें, सिर्फ़ इतना ही लिखा है कि "दक्षिणदेशको संघसहित जानेके लिए प्रस्तुत हुए श्री **भद्रबाहु**स्वामि **उज्जयिनी**से चलकर विहार करते हुए जब एक गहन अटवीमें पहुँचे तब उन्हें एक 'आकाशवाणी' सुन पड़ी। उसपर निमित्तज्ञानद्वारा विचार करनेसे उन्हें मालूम हो गया कि उनका अन्त निकट है, आयु थोड़ी रह गई है। तब उन्होंने समस्त मुनिसंघको **विशाख**आचार्यके आधिपत्यमें सौंपकर उसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दक्षिणकी ओर भेज दिया और आप स्वयं '**चंद्रगुप्त**' मुनिके साथ उसी अटवीकी गिरिगुहामें रहने लगे। वहींपर अन्तमें उन्होंने समाधिपूर्वक अपना देह त्याग किया।" किन्तु वह '**महाऽटवी**' या '**गिरिगुहा**' कौनसे देश या नगरमें थी, इसका उक्त चरित्रमें कहीं कुछ पता नहीं है। हाँ, इतना पता ज़रूर है कि वह, पर्वत और गुफायुक्त अटवी '**उज्जयिनी**' में नहीं थी। उज्जयिनीसे आगे चलकर दूसरे देशोंमें विहार करते हुए ही वह कहीं पर उन्हें मिली थी। परन्तु **श्रीमल्लिभूषण**के शिष्य **नेमिदत्त**, अपने 'आराधनाकथाकोश' में, **भद्रबाहु**का समाधि-स्थान **उज्जयिनी** नगरीमें एक वटवृक्षके निकट बतलाते हैं और यहाँतक लिखते हैं कि श्रीभद्रबाहुस्वामी स्वयं उज्जयिनीसे गये ही नहीं; बल्कि उन्होंने मुनियोंसे अपनी अल्पायुका कारण बतलाकर उन्हें अपने प्रधान शिष्य विशाखाचार्यके साथ, चरित्र-रक्षाके लिए, दक्षिणदेशको भेज दिया और आप वहीं उज्जयिनीमें ठहरे रहे। मुनियोंके चले जानेके बाद उनके वियोगसे उज्जयिनीका राजा चंद्रगुप्त भी भद्रबाहुको नमस्कार करके मुनि हो गया। यथाः—

"अत्र द्वादशवर्षाणां भाविदुर्भिक्षकं ध्रुवम्।
मया त्वल्पायुषात्रैव स्थीयते भो तपस्विनः॥ १९॥
यूयं दक्षिणदेशं तु संगच्छन्तु कृतोद्यमाः।
इत्युक्त्वा दशपूर्वज्ञं विशाखार्यमुनीश्वरम्॥ २०॥
स्वशिष्यं संघसंयुक्तं सुधीः संज्ञानलोचनम्।
प्रेषयामास चारित्ररक्षार्थं दक्षिणापथम्॥ २१॥
तदा ते मुनयः संतो गत्वा तत्र सुखं स्थिताः।
गुरोर्वाक्यानुगाः शिष्याः संभवंति सुखाश्रिताः॥ २२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ततश्चोज्जयिनीनाथश्चंद्रगुप्तो महीपतिः ।
वियोगाद्यतिनां भद्रबाहुं नत्वाऽभवन्मुनिः ॥ २३ ॥
तदा श्रीभद्रबाहुश्च मुनीन्द्रः श्रुतपोनिधिः ।
श्रीमज्जिनेन्द्रचन्द्रोक्तसारतत्त्वविदाम्बरः ॥ २४ ॥
उज्जयिन्यां सुधीर्भद्रवटवृक्षसमीपके ।
क्षुत्पिपासादिकं जित्वा संन्यासेन समन्वितः ॥ २५ ॥
स्वामी समाधिना मृत्वा संप्राप्तः स्वर्गमुत्तमम् ।
सोऽस्माकं सन्मुनिर्दद्यात्सन्मार्गं शर्मकोटिदम् ॥ २६ ॥

जो लोग चरित्रग्रंथोंको अक्षरशः सत्य मानते हैं—उन्हें साक्षात् वीर भगवान्‌की वाणी समझते हैं—और जो ऐतिहासिक पर्यालोचना करनेवाले दूसरे विद्वानोंको इस प्रकारके उत्तर देते हैं:—"आपको अमुक चरित्रग्रंथ माननीय है या कि नहीं? यदि नहीं है तो आपसे कुछ कहना ही खपुष्पके ऐसा है (आकाशके फूल समान है।)" ऐसे लोगोंके लिए नेमिदत्तका उपर्युक्त लिखना बड़ा ही चिन्ताजनक है और उन्हें बहुत ही सोचमें डालेगा।

नेमिदत्तके अस्तित्वका समय विक्रमकी १६ वीं या १७ वीं शताब्दिके लगभग माना जाता है। उनके इस कथनको सत्य माननेसे चंद्रगिरिपर्वत तथा अन्यस्थानोंके बहुतसे प्राचीन शिलालेखोंको और दूसरे विद्वानोंके गवेषणापूर्ण कथनोंको भी बिना हां कारण, अप्रमाण ठहराना होगा। साथ ही श्रवणबेल्गोलसे, जिसे जैनबद्री भी कहते हैं, उक्त तीर्थको भी उठाना पड़ेगा और जैन-सिद्धान्तभास्करके लेख भी ग़लत हो जायँगे। अतः जैनविद्वानोंके इस विषयमें अपना प्रगट मन्तव्य करना चाहिए।

समाजसेवक—

जुगलकिशोर मुख्तार।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समालोचनाकी आलोचना।

(एक अर्थशास्त्रका प्रश्न।)

कुछ दिन हुए धूलियानिवासी सेठ गुलाबचंदजीने मालवा प्रान्तिक सभाके अधिवेशन पर एक व्याख्यान दिया था। तत्पश्चात् शोलापुरनिवासी सेठ हीराचंद नेमचन्दजीने 'जैनमित्र' में इस व्याख्यानकी समालोचना प्रकाशित की। समालोचना कैसी हुई इसका पता इस बातसे लग सकता है कि इस समालोचनासे जैनसमाजमें एक हलचल पैदा हो गई है। 'जैनतत्त्वप्रकाशक,' 'सत्यवादी,' 'जैनमित्र' में अबतक इस समालोचनाकी अनेक आलोचनायें हो चुकी हैं और उनमें सेठ हीराचंद नेमचन्दजीकी कई बातों पर कटाक्ष किये गये हैं। वास्तवमें बात भी यही है कि सेठजीने अपनी समालोचनामें कई बातें ऐसी कह डालीं और जैनसमाजपर एक ऐसा मिथ्या दोष लगाया कि इन सबके कारण जैनसमाजमें असंतोष फैले बिना न रहा। हमको भी सेठजीकी कई बातें बहुत खटकी हैं। उनमेंसे प्रायः सभी बातोंकी आलोचना हो चुकी है; परन्तु एक बात ऐसी है जिस पर अभी अधिक लिखनेकी गुंजाइश है। वह भारतवर्षकी दरिद्रताका प्रश्न है।

सेठ गुलाबचंदजीने अपने व्याख्यानमें कहा था कि "देशका सोना, चाँदी, मोती, माणिक, हीरा आदिके रूपमें अनन्त वैभव विदेशोंमें पहुँच गया और उसके बदलमें हमें मिला लोहा, काँच,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पत्थर, मिट्टी, लकड़ी। इससे अधिक और क्या हमारी दुर्दशा होगी हम दरिद्र बन गये। हमारे पास खानेको अन्न नहीं, पहरनेको वस्त्र नहीं। हमारे करोड़ों भाई इसी दुर्दशाके मारे प्रतिदिन कालके कराल मुँहमें फँसे जा रहे हैं।" अर्थात् यह कह कर सेठजीने भारत वर्षकी दरिद्र अवस्थाको दिखाना चाहा है। इस पर सेठ हीराचन्द नेमचन्दजीने अपनी समालोचनामें सन् १९०९ से सन् १९१३ ईसवीतकका सोने चाँदीका हिसाब प्रकाशित किया है जिससे यह मालूम होता है कि इन पाँच वर्षोंमें यहाँसे विदेशोंमें जितना सोना चाँदी गया है उससे छः गुण सोना और चार गुण चाँदी इस देशमें आई है। इसके सिवाय और भी दो चार बातें लिखकर सेठजीने यह साबित करना चाहा है कि देश धनसम्पन्न होता जाता है।

सेठजी! यह अर्थशास्त्रका प्रश्न है। केवल सोने-चाँदीका हिसाब प्रकाशित कर देनेसे काम नहीं चलेगा। अनेक बातोंसे देशके धनकी जाँच होती है। क्या आप सोने-चाँदीको ही धन समझ बैठे हैं? सोने-चाँदीके सिवाय देशमें जो और सैकड़ों चीजें पैदा होती हैं अथवा विदेशोंसे आती हैं उनका भी तो हिसाब लगाना चाहिए। और जो देशी चीजें विदेशोंको चली जाती हैं उनका भी ख़याल रखना चाहिए। ग़रज यह कि किसी देशके धनका अंदाजा तब हो सकता है जब उस देशकी पैदावार और उस देशमें बाहरसे आनेवाली चीजोंमें से वे चीजें घटा दी जायँ जो विदेशोंको जाती हैं। सोना-चाँदी तो देशके धनका केवल एक अंश है। क्या अन्न, कपास इत्यादि ज़मीनमें पैदा होनेवाली

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनेक चीज़ें, सोने–चाँदीके अतिरिक्त अनेक खनिज पदार्थ, मकान, पशु इत्यादि धनमें शामिल नहीं हैं? यदि हैं तो इनका भी हिसाब प्रकाशित करना था।

सबसे प्रसिद्ध और प्रमाणित अँगरेज़ी अर्थशास्त्रज्ञ मिस्टर मार-शल हैं। देखिए, उन्होंने धनकी व्याख्या इस प्रकार की है–"धनमें ऐसी चीज़ोंकी गिनती है जो हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति किसी न किसी प्रकार करती हों। अर्थात् धनमें वे ही चीज़ें शामिल करनी चाहिए जो हमारे काम की हैं; परन्तु साथ ही इसके यह भी याद रखना चाहिए कि जिन चीज़ोंकी हमको ज़रूरत है वे सभी धनमें गर्भित नहीं हैं। कुछ चीज़ें ऐसी भी हैं जिनकी हमें ज़रूरत तो है, परन्तु हमको उन चीज़ोंको धनमें शुमार न करना चाहिए। उदाहरणके लिए 'मित्रोंका प्रेम' ले लीजिए। इस प्रेमकी हमको ज़रूरत तो है परन्तु यह धन नहीं है। अच्छा तो अब हमको यह देखना चाहिए कि ज़रूरतकी चीज़ोंमेंसे किन किन चीज़ोंको हम धन कह सकते हैं। धनमें एक तो सब तरहके द्रव्य-रूप पदार्थ शामिल हैं, जैसे प्राकृतिक पदार्थ–ज़मीन, पानी, हवा, खेती, खान, मछलीके शिकार और कारख़ानोंकी पैदावार; मकान, मशीन और औज़ार; रहननामे दूसरी तरहकी दस्तावेज़ें; कम्पानियोंके शेर (हिस्से), एकाधिकार और तरह तरहके स्वत्त्व, कापी राइट इत्यादि। दूसरे, वे सब **बाहरी** चीज़ें शामिल हैं जो मनुष्यसे संबंध रखती हैं और जिनके द्वारा द्रव्य प्राप्त हो सकते हैं, जैसे दूसरोंके साथ मनुष्यके व्यापारिक संबंध–उसकी विश्वासपात्रता इत्यादि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि किसी मनुष्यके पास गुलाम हों, तो वे भी धन हैं। धनमें मनुष्यकी निजी शक्तियाँ और गुण शामिल नहीं हैं, यहाँ तक कि वे शक्तियाँ भी शामिल नहीं हैं जिनके द्वारा मनुष्य अपना निर्वाह करता है; क्योंकि ये सब चीज़ें मनुष्यके **अंदर** हैं। धनमें (ज़रूरतकी) केवल वे ही चीजें शामिल हैं जो मनुष्यके **बाहर** हैं। "

अब विचार कीजिए कि सोने-चांदीके अतिरिक्त और भी कितनी ही महत्त्वकी चीज़ें हैं जिनका धनमें शुमार होना चाहिए। यह तो हुई सामान्य बात। अब यह देखना चाहिए कि भारतवर्षके धनके विषयमें इन बातोंपर किस तरह विचार करना चाहिए। क्योंकि भारतवर्षके धनके विषयमें धनसंबंधी कुछ बातें ऐसी भी हैं जिनका विचार दूसरे देशोंके धनका अंदाज़ा लगानेमें नहीं करना पड़ता; जैसे इँग्लेण्डके 'इंडिया आफिस' इत्यादिका ख़र्च जो हमको देना पड़ता है। अब यह पता लगानेके लिए कि भारतवर्षका धन बढ़ रहा है या घट रहा है, हमको भारतवर्षकी आमदनी और ख़र्चका हिसाब लगाना चाहिए। भारतवर्षकी आमदनी और ख़र्च दो तरहके हैं, एक तो देशी और दूसरे विदेशी। देशी आमदनीमें वे चीज़ें (पैदावर) शामिल हैं जो भारतवर्षमें ही पैदा होती हैं और देशी ख़र्चसे उस ख़र्चसे मतलब है जो देशी चीज़ोंके पैदा करनेमें पड़ता है। भारतवर्षकी पैदावर भी दो विभागोंमें बाँटी जा सकती है, एक तो वह भाग जो इसी देशमें रह जाता है अर्थात् भारतवासियोंके ही काममें आजाता है, और दूसरा वह भाग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जो यहाँसे विदेशोंको चला जाता है। इन दोनों भागोंका अलग अलग हिसाब लगाना पड़ेगा। विदेशी आमदनीमें वह माल या रुपया शामिल है जो हमको विदेशोंसे मिलता है और इसी तरह विदेशी ख़र्चसे उस माल या रुपयेसे मतलब है जो यहाँसे विदेशोंको चला जाता है। विदेशी आमदनी और ख़र्चमें ये मद्द शामिल हैं:—

विदेशी आमदनी—

(१) भारतवर्षसे विदेशोंको जो (तिजारती) माल जाता है उसकी बिक्रीकी आमदनी। (इसी मालमें सोना—चाँदी भी शामिल है।)

(२) भारतवर्षमें जो रुपया या माल विदेशोंसे क़र्ज़के तौर पर आता है। भारतवर्ष विदेशोंसे बहुत रुपया क़र्ज़ लेता रहता है। यह रुपया रेलों, कारखानों इत्यादि अनेक कामोंमें लगा हुआ है।

(३) वह रुपया जो विदेशी यात्री भारतवर्षमें आकर ख़र्च कर जाते हैं।

(४) वह रुपया जो विदेशी लोग भारतवासियोंको दान कर देते हैं, वह रुपया जो विदेशी व्यापारी भारतवर्षको भेजते हैं और वह रुपया जो विदेशोंमें गये हुए भारतवासी इस देशमें भेजते हैं।

विदेशी ख़र्च—

(१) विदेशोंसे जो माल इस देशमें आता है उसका मूल्य। इसी मालमें सोना-चाँदी भी शामिल है।)

(२) भारतवर्षमें जो विदेशी मूलधन लगा हुआ है उसका ब्याज।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(३) वह रुपया जो भारतवर्ष विदेशी क़र्ज़में चुकाता रहता है; क्योंकि भारतवर्ष अपने पुराने (विदेशी) क़र्ज़को बराबर चुकाता भी जाता है ।

(४) वह रुपया जो भारतवर्षमें रहनेवाले विदेशी सौदागर, वकील, डाक्टर और अनेक सरकारी कर्मचारी अपनी आमदनीमें से बचा बचाकर अपने घर अथवा भारतवर्षके बाहर विदेशोंको भेजते रहते हैं ।

(५) वह रुपया जो भारतवर्षके व्यापारियोंको विदेशी जहाज़वालोंको किरायेकी तरह पर देना पड़ता है । क्योंकि भारतवर्षके पास जहाज़ नहीं हैं; कुछ हैं भी तो उनकी संख्या 'नहीं' के बराबर है। जहाज़ोंके किरायेमें भारतवर्षको बहुत रुपया देना पड़ता है। यह सब रुपया विदेशियोंको मिलता है अर्थात् विदेशोंमें पहुँचता है ।

(६) वह रुपया जो भारतवासी विदेशियोंमें जाकर ख़र्च कर आते हैं । वह रुपया जो भारतवासी विदेशोंको सहायतार्थ भेजते हैं। जैसे आज कल युद्धमें सहायता देनेके लिए यहाँसे लाखों रुपया इँग्लैंड और फ्रांसमें पहुँच रहा है ।

(७) वह रुपया जो भारतसरकार अँगरेज़ी सरकारको देती है । अँगरेज़ी सरकार भारतवर्षके शासनका जो प्रबंध इंडिया आफिस द्वारा करती है उसीके बदलमें यह रुपया लेती है । सन् १९०९।१० ई० में (अर्थात् एक वर्षमें) इस खर्चके लिए २८ करोड़ रुपया भारतवर्षको देना पड़ा था। प्रति वर्ष लगभग इतना ही रुपया देना पड़ता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विदेशी आमदनी और ख़र्चका उपर्युक्त मदोंमें हिसाब लगाना चाहिए। देशी और विदेशी आमदनी और ख़र्चका हिसाब लगाते समय इस बातपर भी ध्यान रखना चाहिए कि कोई रक़म दो बार हिसाबमें न आजाय। आमदनी और ख़र्चके सिवाय कुछ हिसाब उस धनका भी लगाना चाहिए जो पहलेसे भारतवासियोंके घरोंमें ज़मीनके नीचे गढ़ा हुआ रक्खा है। यह देखना चाहिए कि इस गढ़ेहुए धनमें कमी हो रही है या ज़ियादती?

सेठजी! अब आपने देखा कि भारतवर्षके धनका अंदाज़ा लगानेके लिए सिर्फ़ सोने-चाँदीका हिसाब लगानेसे कुछ काम नहीं चल सकता। हाँ, अभी एक बात और है। यदि हम थोड़ी देरके लिए यह मान भी लें कि भारतवर्षके धनका अंदाज़ा केवल सोने-चांदीके हिसाबसे ही लग सकता है, तो क्या आप यह समझते हैं कि यह सोना-चाँदी भारतवर्षमें लाभके रूपमें या मुफ्त चला आता है? क्योंकि लाभके रूपमें या मुफ्त चले आनेसे ही धनकी वृद्धि हो सकती है। यदि हमको इसके बदलेमें उतने ही मूल्यका माल देना पड़ता है तो हमारे धनकी वृद्धि कैसे हुई? हम तो वैसेके वैसे ही रहे। जितना हमारे पाससे गया उतना ही आया। यदि आप किसी मनुष्यको दो लाख रुपयेकी रुई दे दें और उसके बदलेमें वह मनुष्य आपको दो लाख रुपयेका सोना-चांदी दे जाय, तो क्या आपके धनकी वृद्धि होगी? वृद्धि तो उसी सूरतमें होगी जब आपको इस व्यापारसे कुछ लाभ हुआ हो, अथवा आपको कोई मुफ्तमें सोना-चाँदी दे जाय। श्रीयुत दादाभाई नोरोजीने एक पुस्तक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिखी है। उसका नाम है Poverty and un-British Rule in India। यह पुस्तक सन् १९०१ ईसवीमें लंडनमें प्रकाशित हुई थी। इसी पुस्तकमें एक जगह ठीक इसी विषयपर विचार किया गया है और आपकी बातका उत्तर इस प्रकार दिया है। यहाँपर हम उस अंशका आशयानुवाद देते हैं;—

" बहुधा कहा जाता है कि भारतवर्षमें विदेशोंसे बहुत सोना-चांदी (Bullion) आया है, इस लिए भारतवर्ष बहुत धनवान् हो गया है। अब देखिए कि असलियत क्या है।

" सबसे पहली बात तो यह है कि भारतवर्षमें विदेशोंसे जो चाँदी आई है वह हमको लाभके रूपमें नहीं मिली। विदेशोंसे जो माल इस देशमें आता है वह उस मालसे कम है जो यहाँसे विदेशोंको जाता है और उसपर जो कुछ मुनाफ़ा मिलता है। अर्थात् जितना माल यहाँसे बाहर जाता है उतना बाहरसे नहीं आता। यदि यह कहा जाय कि विदेशोंसे जो चाँदी हमको मिलती है वह मालकी इसी कमीको पूरा करनेके लिए मिलती है, तो यह भी ठीक नहीं है। क्योंकि यह कमी तो बहुत बड़ी है। जितनी चाँदी यहाँ पर आती है वह इस कमीको देखते हुए बहुत ही थोड़ी है। हम पहले भी कह चुके हैं कि विदेशोंसे आनेवाला माल (जिसमें विदेशोंसे आया हुआ सब सोना-चाँदी भी शामिल है) विदेशोंको गये हुए माल और उसके मुनाफ़ेसे बहुत ही कम है। यह कमी इतनी है कि विदेशमें गये हुए मालपर जो मुनाफ़ा हमको मिलता है, सरकारको अफ़ीमसे जितनी आमदनी होती है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और स्वयं अफ़ीमका भी एक बहुत बड़ा भाग, इन तीनोंको मिला दिया जाय तब कहीं यह कमी पूरी हो सकती है। अच्छा तब यह सोना-चाँदी यहाँ क्यों आता है? इसके आनेका मुख्य कारण यह है कि हमको व्यापार और सरकारी कामकाज चलानेके लिए सिक्कोंकी ज़रूरत है। पहले सिक्कोंकी इतनी ज़रूरत न थी। पहले भूमिके लगान या मालगुज़ारीमें अन्नका कुछ भाग दिया था, परन्तु ब्रिटिश गवर्नमेन्ट इस लगानको सिक्कोंमें लेने लगी। इसी कारण सिक्कोंकी ज़रूरत बहुत बढ़ गई और सिक्कोंके लिए सोना—चाँदीकी ज़रूरत पड़ी। भारतवर्षका विदेशोंके साथ व्यापार भी बढ़ गया (यद्यपि इससे भारतवर्षको कुछ लाभ न हुआ) और इससे भी सिक्कोंकी ज़रूरत बढ़ गई। सन् १८०१ से सन् १८६९ तक भारतवर्षमें जितना सोना—चाँदी विदेशोंसे आया यदि उसमें वह सोना चाँदी जो इसी समयमें विदेशोंको गया, घटा दिया जाय, तो ३३५४७७१३४ पौंड*का सोना—चाँदी बचता है, अर्थात् इतने पौंडका सोना—चाँदी भारतवर्षमें ज़ियादा आया। इसमेंसे २६५६५२७४९ पौंडके सोने—चाँदी के सिक्के बनाये गये। सिक्कोंकी इस रकम में वे सिक्के शामिल नहीं हैं जो सन् १८०१ से सन् १८०७ तक मद्रासमें बने और सन्

* मूल पुस्तकमें पौंडमें ही मूल्य दिया है। सुभीतेके कारण हमने इसके रुपये नहीं बनाये। पाठक जानते ही हैं कि एक पौंड १५) का होता है। बीस शिलिंगका एक पौंड और बारह पेंसका एक शिलिंग होता है। यह रक़म और आगेकी और रक़में श्रीयुत दादा भाई नेरोजीने पार्लियामेंटके सरकारी नक़्शों से ली हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८२१-२२, १८२४-१८३१ और १८३३ ईसवीमें बम्बई में बने, क्योंकि इनका हिसाब न मिल सका। अब जितने पौंड का सोना-चाँदी आया और उस सोना-चाँदीमेंसे जो सिक्के बनें उस रक़मको घटा दिया जाय, तो ७०००००० पौंडका सोना-चाँदी बच रहता है। यही सोना-चाँदी भारतवर्षके दूसरे कामोंके लिए-जैसे गहने इत्यादिके लिए बचा। यह कहा जा सकता है कि कुछ सिक्के फिर गला दिये गये होंगे और उनकी धातु बन गई होगी। परन्तु इन सिक्कोंकी संख्या ज़ियादा नहीं हो सकती, क्योंकि सोना-चाँदी सिक्कोंसे सस्ता था। सस्ते होनेका कारण यह है कि सरकार सिक्के बनानेकी सैकड़ा पीछे दो पौंड मज़दूरी ले लेती थी। * मिस्टर हेरीसनने भी कहा था कि चूँकि सिक्के बनानेकी मज़दूरी सैकड़ा पीछे दो (पौंड या रुपये) लगती है, इस लिए जो मनुष्य सिक्कोंको किसी और काममें लाना चाहते हैं उनको हानि उठानी पड़ती है।

" इसके सिवाय हमको सिक्कोंके घिसनेका भी हिसाब लगाना चाहिए। इँग्लैंडमें शिलिंगके सिक्कोंके घिसनेसे सैकड़ा पीछे २८

* श्रीयुत दादाभाई नोरोजी जिस समयका (सन १८०१-१८६९ का) हाल लिख रहे हैं उस समय भारतवर्षमें कायदा था कि चाहे जो मनुष्य सरकारी टकसाल पर अपना सोना-चांदी ले जाय, सरकार उसके सिक्के बना देती थी और यदि सो रुपयाकी चाँदीके सिक्के बनते थे तो दो रुपया बनानेकी मज़दूरी ले लेती थी। उन दिनों सिक्के खालिस धातुके बनते थे। किसी तरहकी मिलावट न होती थी। यह कायदा जिसको Free coinage कहते हैं भारतवर्षमें सन् १८९३ ईसवी तक रहा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिलिंगका नुकसान हो जाता है और सिक्का पैंसके सिक्कोंके घिसने-से सैकड़ा पीछे ३७ सिक्स-पेंसका नुकसान हो जाता है। जिस नक्शेपरसे यह हिसाब लिया गया है उसमें यह नहीं लिखा है कि इतना नुकसान कितने समयमें होता है। भारतवर्षमें सिक्कोंके घिसनेसे इससे कहीं ज़ियादा नुकसान होता होगा; क्योंकि इस देशमें सरकारी कामोंके लिए सिक्कोंका इधरसे उधर आनाजाना बहुत होता है और इसके सिवाय यहाँके लोग भी सिक्कोंको ज़ियादा सख्तीसे काममें काम लाते हैं और सिक्कोंका उपयोग भी इस देशमें बहुत होता है। एक हाथसे दूसरे हाथमें जानेसे और उठाने रखनेसे सिक्के घिसते जाते हैं और उनकी धातु कम होती जाती है। मिस्टर हैरीसनने हिसाब लगाया था कि भारतवर्षमें प्रतिवर्ष १० लाख पौंडका सोना-चाँदी सिक्कोंमेंसे घिस जाता है।

"अब हम यह देखते हैं कि जो सोना-चाँदी सन् १८०१ से लेकर १८६९ ईसवी तक अर्थात् ६९ वर्षमें आया उसमेंसे कितने सोने-चाँदीके सिक्के बने, कितना सोनाचाँदी सिक्कोंमेंसे घिस घिस कर बरबाद हो गया और कितना सोना-चाँदी हमारी अन्य आवश्यकताओंके लिए बच रहा। हम ऊपर लिख आये हैं कि इन ६९ वर्षोंमें ३३५४७७१३४ या लगभग ३३५०००००० पौंडका सोना-चाँदी देशमें ज़ियादा आया और इसमेंसे लगयग २६६००००० पौंडके सिक्के बने। सिक्कोंमेंसे ६६००००० पौंडका सोना-चाँदी ६९ वर्षमें घिस गया होगा। इस रक़मको निकाल देनेसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२००००००० पौंडके सिक्के बचे। इसमेंसे भी, यद्यपि सिक्कोंके गलानेमें सैकड़ा पीछे २ पौंडका नुकसान होता है, परन्तु फिर भी हम मान लेते हैं कि ५००००००० पौंडके सिक्कोंको गला कर फिर सोना-चाँदी बना लिया गया होगा। इस रक़मको भी घट देनेसे केवल १५००००००० पौंडके सिक्के रह गये। अब इस रक़मको और जितना सोना-चाँदी घिस गया (अर्थात् ६६००००० या कमसे कम ५००००००० पौंड) को जोड़कर-यह जोड़ २००००००० पौंड हुआ-भारतवर्षमें कुल जितना सोना-चाँदी आया उसमेंसे घटा दो। घटानेसे १३५००००० पौंडका सोना चाँदी सिक्कोंके अतिरिक्त देशकी बाक़ी तमाम ज़रूरतोंके लिए बचा। भारतवर्षकी जन-संख्या, उस समय २००००००० थी। इस जनसंख्या पर १३५००००० पौंडको बाँट दो, तो ६९ वर्षके समय तक सिक्कोंके अतिरिक्त और अनेक कामोंके लिए प्रति मनुष्य १३ शिलिंग ६ पेंस (१३ ½ आना) से भी कम सोना-चाँदी पड़ा! एक मनुष्यके लिए ६९ वर्षमें केवल १३½ आनेका सोना-चाँदी कितनी छोटी रक़म है!! यदि कुल सोना-चाँदी अर्थात् ३३५००००० पौंडको भी जन-संख्या पर फैला दिया जाय, तो भी ६९ वर्षमें ३३ शिलिंग ६ पेन एक मनुष्यकी **तमाम** ज़रूरतोंके लिए हुए; इसमेंसे हमने सिक्कोंके घिसनेकी भी रक़म नहीं घटाई। अब आप इस रक़मका मिलान यूनाइटेड किंग्डम (अँगरेजोंकी विलायत-इँग्लेंड, वेल्स, स्काटलेंड और आयरलेंड) के साथ कीजिए। वहाँपर सिक्कोंके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोना-चांदीको निकाल कर बारह वर्ष (सन् १८५८–१८६९) में ही प्रति मनुष्य ३० शिलिंग (२२॥ रुपया) का औसत पड़ता है, जब कि भारतवर्षमें ६९ वर्षमें १३½ आनेसे भी कमका औसत पड़ता है ! कहा जाता है कि भारतवासी धन जमा करते जाते हैं, परन्तु यह तो विचारिए कि जमा करनेके लिए प्रतिमनुष्य कितने रुपयेका औसत पड़ सकता है; उनको मिलता ही क्या है जिसमेंसे वे जमा करें। इसके साथ ही ज़रा यह भी देखिए कि इँग्लेंडवाले सोने चाँदीके बरतनों, जवाहिरातों, क़ीमती घड़ियों इत्यादिके रूपमें कितना जमा कर लेते हैं।.....असली बात यह है कि जमा करना तो दूर रहा लाखों भारतवासी, जिनको भरपेट खाना भी नहीं मिलता, यह भी नहीं जानते कि गिरहमें एक रुपया होना कैसा होता है।....यह विचार भी कि चांदीके आनेसे भारतवर्ष धनवान् हो गया है एक विचित्र भ्रम है ! इस भ्रमका कारण यह है कि मनुष्य एक ज़रूरी बातपर ध्यान नहीं देते, अर्थात् वे यह नहीं सोचते कि जो चाँदी भारतवर्षमें आती है वह उस फ़र्क़को पूरा करनेके लिए नहीं आती जो यहाँसे बाहर जानेवाले माल और उसके मुनाफ़े, और विदेशोंसे आनेवाले मालमें होता है। चाँदी इस गरज़से यहाँ आती ही नहीं, यह बात हम ऊपर समझा चुके हैं। चाँदी इस देशमें इस लिए आती है कि यहाँ पर उसकी ज़रूरत है। इस लिए यह न समझना चाहिए कि चाँदीके आनेसे भारतवर्ष धनवान् होता जाता है। मान लो कि हम किसी मनुष्यको २०) का माल दे दें और उसके बदलेमें हमको ५) का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो दूसरी तरहका माल मिले और ५) की चाँदी मिले, अर्थात् हमको २०) की चीज़ोंके बदलेमें केवल १०) की चीज़ें मिलें, और फिर भी हम यह कहें कि चूँकि हमारे पास ५) की चाँदी आगई है इस लिए हमारे धनमें ५) की वृद्धि हो गई, तो भला ऐसा धनवान् होना कौन पसंद करेगा ? इस तरहसे धनवान् होनेका विचार करनेसे सचमुच बड़े भ्रमपूर्ण परिणाम होते हैं। जो मनुष्य बहुतसी चाँदीको भारतवर्षमें आते हुए देखकर, इस तरह धोखेमें आजाते हैं वे उस बच्चेके समान हैं जो किसी बड़े आदमीको एक पूरी रोटी खाते हुए देखकर बड़ा आश्चर्य करता है, क्योंकि उस बच्चेको स्वयं उस रोटीमेंसे एक छोटा टुकड़ा खानेसे ही संतोष हो जाता है। और वह बच्चा यह तो बिलकुल ही नहीं जानता कि वह पूरी रोटी भी उस बड़े आदमीके लिए बिलकुल नाकाफ़ी है।" इत्यादि।

सेठजी ! अब आपने देखा कि केवल सोना-चाँदीके आने जानेका विचार करनेसे देशके धनका पता नहीं लग सकता। ऐसा विचार करना एकान्तवाद है। आपको सभी बातोंपर विचार करना चाहिए। संभव है कि देशमें सोना-चाँदी तो अधिक आता हो, परन्तु इससे भी जियादा माल देशके बाहर चला जाता हो। तब कहिए सोना-चाँदी देशके धनकी कैसे वृद्धि कर करता है। एक ही अंशको ग्रहण करनेसे बहुधा भ्रम हो जाता है; इस बातको हम एक उदाहरण देकर समझाते हैं। फ्रांस देशके व्यापारका पाँच वर्षका हिसाब देखिए:—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ईसवी सन्	कितने डौलर*का माल फ्रांसके बाहर गया	कितने डौलरका माल फ्रांसमें विदेशोंसे आया
१८९७	७२००००००	७९१०००००
१८९८	७०२०००००	८९५०००००
१८९९	८३१०००००	९०४०००००
१९००	८२२०००००	९४०००००००
१९०१	८३३०००००	९४३०००००
कुलजोड़	३९०८०००००	४४७३०००००

इस हिसाबसे मालूम होगा कि फ्रांसने विदेशोंको जितना माल बेचा उससे ज़ियादा माल विदेशोंसे ख़रीदा, अर्थात् केवल पाँच वर्षमें ही फ्रांसने विदेशोंसे ५६५००००० डौलरका माल ज़ियादा ख़रीदा, या यों कहिए कि एक वर्षमें ११३००००० डौलरका माल जियादा ख़रीदा। अब क्या आप इससे यह नतीजा निकालेंगे कि फ्रांसको प्रतिवर्ष ११३००००० डौलर विदेशोंको ज़ियादा देने पड़ते हैं? अगर इसी हिसाबसे प्रतिवर्ष फ्रांसका धन कम होता रहे तो कुछ ही वर्षमें फ्रांसके पास एक कौड़ी भी न रहे। यदि आप इँग्लेंडका हिसाब देखें, तो आपको और भी आश्चर्य होगा। इँग्लेड प्रति वर्ष विदेशोंसे १२०००००००० डौलरका माल अधिक ख़रीदता है। यदि इस मालका मूल्य इँग्लेड विदेशोंको दे, तो छः

* डौलर अमेरिकाके यूनाइटेड स्टेट्सके एक सिक्केका नाम है। इसका मूल्य ४ शि० २ पे० अर्थात् ३ रु० दो आनेके लगभग होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महीनेमें ही इँग्लेडका सारा रुपया विदेशोंको चला जाय और इँग्लेडमें एक पेंस भी न रहे। क्या कारण है कि फ्रांस या इँग्लेंडका झटपट दीवाला नहीं निकल जाता? इसका करण यह है कि इँग्लेड और फ्रांस विदेशोंकी कई तरहसे सेवा करते हैं। वे विदेशियोंके मालको अपने जहाजोंमें ले जाते हैं और विदेशियोंको व्यापार करनेके लिए अपने पाससे धन देते हैं। इसी लिए उनको विदेशियोंको प्रतिवर्ष इतना रुपया नहीं देना पड़ता।

अब आपने देखा कि एकपक्षको ही ग्रहण करनेसे कितने बड़े भ्रमकी संभावना हो सकती है। हम इस लेखके शुरूमें अनेक बातोंका जिक्र कर आये हैं। आपको भारतवर्षके धनके निर्णय करनेमें उन सब बातोंका विचार करना चाहिए। भारतवर्षके धनमें वृद्धि हो रही है या नहीं, यह विषय बड़ा ही टेढ़ा है। यदि आप इस उलझनको हल कर दें तो जैनसमाज ही नहीं किन्तु समस्त भारतवर्ष आपका बड़ा कृतज्ञ होगा।

—संशोधक।

पुस्तक-परिचय।

गत नौवें अंकमें जो पुस्तकपरिचय प्रकाशित हुआ था, उसके ५४० वें पृष्ठके अन्तका कुछ अंश छपनेसे रह गया था। वहाँ जैनप्रभात मासिकपत्रके परिचयमें इतना अंश और शामिल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर लेना चाहिए—" समाचारपत्र अबतक उनके (न्या० दि० पं० पन्नालालजीके) विषयमें सर्वथा चुप देखे जाते हैं । न जाने इनके और कितने भाईबन्द हमारे भोले भाइयोंको ठग रहे होंगे। हम राह देख रहे हैं कि उनका भी कच्चा चिट्ठा शीघ्र ही प्रकाशित हो। प्रान्तिकसभाका और सहयोगीका यह प्रस्ताव हमें पसन्द न आया कि प्रतिष्ठाचार्योंकी कमी है, इसलिए उनके बढ़ानेका यत्न किया जाय। कौन कह सकता है कि नये प्रतिष्ठाचार्य भी न्यायदिवाकर-जीके ही भाईबन्द न बन जावेंगे और निःस्वार्थदृष्टिसे काम करने-वाले होंगे ? सभाको इसके बदले यह प्रस्ताव पास करना था कि अब मन्दिरों और प्रतिष्ठाओंकी ज़रा भी ज़रूरत नहीं है, इसलिए कोई भी भाई यह कार्य न करे और यदि कहीं वास्तवमें ज़रूरत हो तो वहाँके भाई ऐसे स्वार्थियोंसे सावधान रहें । हम आशा करते हैं कि जैनप्रभातको जैनसमाजकी ओरसे अच्छा आश्रय मिलेगा और वह नियमितरूपसे अपने दर्शन दिया करेगा। ग्राहक होनेवालोंको ' मैनेजर, जैन प्रभात, चन्दाबाड़ी, बम्बई नं० ४ ' इस ठिकानेसे पत्र लिखना चाहिए।"

कुमारपालचरित। लेखक, मुनि ललितविजय । प्रकाशक, अध्यात्मज्ञानप्रसारक मण्डल, चम्पागली—बम्बई। मूल्य छह आने। गुजरातमें महाराज कुमारपाल नामके एक प्रसिद्ध राजा हो गये हैं। वे चौलुक्यवंशीय (सोलंकी) थे। उनकी राजधानी अनहिलबा-डेमें थी। उनके राज्यका विस्तार बहुत बड़ा था। दूर दूर तक उनकी आज्ञाका पालन होता था। विक्रमसंवत् ११४९ में उनका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जन्म हुआ था। ११९९ में वे राजासिंहासन पर बैठे और १२३० में उनकी मृत्यु हुई। उनके द्वारा गुजरातमें जैनधर्मकी बड़ी उन्नति हुई, जीवदयाका बहुत विस्तार हुआ, मांसभक्षण, यज्ञमें पशुवध आदिका सर्वथा निषेध हो गया और प्रजाकी आशातीत सुखवृद्धि हुई। श्वेताम्बरसम्प्रदायके प्रसिद्ध विद्वान् हेमचन्द्राचार्यको उन्होंने अपना गुरु माना था और उनकी प्रेरणासे उन्होंने जैनधर्मकी उन्नतिके लिए बहुत कुछ किया था। इस पुस्तकमें इन्हीं कुमारपाल महाराजका चरित है जो श्रीजिनमण्डन गणिके वि० स० १४९९ में रचे हुए संस्कृत कुमारपालप्रबन्धके आधारसे लिखा गया है। यद्यपि काव्यशैलीसे लिखे जानेके कारण इसमें अत्युक्तियाँ बहुत हैं, तो भी ऐतिहासिक दृष्टिसे यह बहुत महत्त्वका ग्रन्थ है। मुनि महाराजकी हिन्दी उतनी अच्छी नहीं है जितनी कि होनी चाहिए, तो भी उनका परिश्रम अभिनन्दनीय है। पुस्तकके प्रारंभमें मुनि जिनविजयजी महाशयकी लिखी हुई लगभग ९० पृष्ठकी प्रस्तावना है जो बहुत योग्यतासे लिखी गई है और जिससे सारी पुस्तकका आशय मालूम हो जाता है। प्रस्तावनाकी भाषा भी अच्छी है। उससे मालूम होता है कि महाराज कुमारपालके विषयमें बीसों ग्रन्थोंकी रचना हुई हैं जिनमेंसे १२ ग्रन्थ तो उपलब्ध हैं। इनमेंसे दो गुजरातीमें, एक प्राकृतमें और शेष ९ संस्कृतमें हैं। आवश्यकता है कि इन सब ग्रन्थोंका अध्ययन करके और उस समयके भारतके इतिहासका अध्ययन करके कुमारपाल महाराजका विश्वस्त ऐतिहासिक चरित लिखा जावे। इसके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिए श्वेताम्बर सम्प्रदायके विद्वानोंको अवश्य प्रयत्न करना चाहिए। बहुतसे विद्वानोंका ख़याल है कि कुमारपाल परम आर्हत नहीं, किन्तु परम माहेश्वर थे। जैनधर्मसे उनकी सहानुभूति थी और जैनोंके प्रति उनका सद्भाव था, बस इसी कारण जैन विद्वानोंने उन्हें परम आर्हत लिखा है। इसका उल्लेख गुजरातीके प्रसिद्ध लेखक केशवलाल हर्षदराय ध्रुवने अपनी 'प्रियदर्शना' नाटिकाकी भूमिकामें किया है और स्मिथके Early History of India की साक्षी दी है। ऐसी शंकाओंपर उक्त चरितमें अच्छी तरह विचार होना चाहिए। पुस्तक निर्णयसारमें छपी है और उस पर कपड़ेकी सुन्दर जिल्द बँधी हुई है। सब मिलाकर लगभग पौने तीन सौ पृष्ठ हैं। इतने पर भी मूल्य सिर्फ़ छह आना है जो शायद लागतसे भी कम होगा। प्रकाशकोंकी उदारता प्रशंसनीय ही नहीं अनुकरणीय भी है। इतिहासज्ञोंको इस पुस्तकका संग्रह अवश्य करना चाहिए।

स्वामी दयानन्द और जैनधर्म। लेखक, पं. हंसराजजी शास्त्री पञ्चनदीय। पृष्ठसंख्या १६०। मूल्य आठ आना। मिलनेका पता—आत्मानन्द जैन सेन्ट्रल लायब्रेरी, बाजार जमादार, अमृतसर (पंजाब)। आर्यसमाजके संस्थापक स्वामी दयानन्दजी सरस्वतीने अपने प्रधान ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाशके बारहवें समुल्लासमें जैनधर्मकी चर्चा की है और उसमें जैनधर्मके सिद्धान्तोंका केवल खण्डन ही नहीं किया है, किन्तु उसपर अनेक जघन्य दोषारोपण करके उसको बदनाम करनेकी कोशिशकी है। इस पुस्तकमें पं० हंसराजजीने उस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समुल्लासकी विस्तृत समालोचना की है और स्वामीजीकी भद्दी भूलों, भ्रमपूर्ण विचारों, असभ्य लेखों और जैनधर्मसम्बन्धी शोचनीय अज्ञानताओंका दिग्दर्शन कराया है। इस विषयमें अब तक जितनी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, हमारी समझमें यह उन सबसे अच्छी है। लेखकको अपने प्रयत्नमें यथेष्ट सफलता हुई है। लेखकने असभ्य आक्रमणोंका उत्तर देते समय भी अपनी सभ्यता और भाषासमितिकी बहुत कुछ रक्षा की है और यह इस पुस्तककी प्रधान विशेषता है। इस पुस्तकके पढ़नेके पहले हम नहीं जानते थे कि स्वामी दयानन्दजी जैसे विद्वानके ग्रन्थमें जैनधर्मके सम्बन्धमें इतनी अधिक अज्ञानता भरी होगी और स्वामीजी मामूली श्लोकों और प्राकृत गाथाओंका अर्थ समझनेमें भी इतने कमज़ोर होंगे। विवेकविलास नामक ग्रन्थमें दिगम्बर श्वेताम्बर सम्पदायका भेद बतलाते हुए कहा है—

न भुंक्ते केवली न स्त्रीमोक्षमेति दिगम्बराः।
प्राहुरेषामयं भेदो महान् श्वेताम्बरैः सह॥

इसका अर्थ यह है कि दिगम्बर केवलीका कवलाहार करना और स्त्रीका मोक्ष होना नहीं मानते हैं। बस, श्वेताम्बरोंके साथ उनका यही बड़ा भारी भेद है। परन्तु स्वामीजी इसका यह अपूर्व अर्थ करते हैं—" दिगंबरोंका श्वेताम्बरोंके साथ इतना ही भेद है कि **दिगम्बर लोग स्त्रीसंसर्ग नहीं करते और श्वेताम्बर करते हैं। इत्यादि बातोंसे मोक्षको प्राप्त होते हैं**। यह इनके साधुओंका भेद है।" (सत्यार्थप्रकाश पृ. ४७७)। पुस्तकमें स्वामीजीके पाण्डित्यके इस तरहके बीसों उदाहरण दिये हैं। कुछ उदाहरण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऐसे भी हैं जिनसे मालूम होता है कि स्वामीजीने जैनमतके प्रति द्वेष बढ़ानेकी पवित्र इच्छासे भी बहुतसी बातें लिखी हैं। एक जगह आप लिखते हैं कि "पाखण्डोंका मूल ही जैनमत है।" और एक जगह कहा है "सबसे वैर विरोध निंदा ईर्षा, आदि दुष्ट कर्मरूप सागरमें डुबानेवाला जैनमार्ग है।" "अच्छे पुरुषको जैनियोंका संग करना वा उनको देखना भी बुरा है।" स्वामीजी जैनमतके इतने ज़बर्दस्त जानकार थे कि उसके स्याद्वाद या सप्तभंगी नयको बौद्धधर्ममें भी मान्य बतलाते हैं। स्याद्वादका अर्थ भी बड़ा ऊँटपटाँग किया है। हम आशा करते हैं कि इस पुस्तकको पढ़कर आर्यसमाजके वे सज्जन जो स्वामीजीको सर्वथा निर्भ्रान्त, परम विद्वान् और पूर्वकालके ऋषियोंसे भी बढ़कर महर्षि मानते हैं बहुत कुछ ठिकाने पर आ जावेंगे। अपने पक्षका मण्डन करनेके लिए दूसरे धर्मके सिद्धान्तोंका खण्डन करना सज्जनानुमोदित अवश्य है; परन्तु खण्डनका अर्थ यह नहीं है कि अपने पक्षके अन्धाधुन्ध जोशमें आकर दूसरे धर्मको गालियाँ भी दे डालना और उसके सिद्धान्तोंको समझे बिना ही उसे बुरा भला कह डालना। स्वामीजीकी खण्डनशैली इस पुस्तकसे इसी प्रकार-की मालूम होती है। समाजी विद्वानोंको अपने गुरुकी इस शैलीका त्याग कर देना चाहिए।

आप्तपरीक्षाका भावानुवाद। लेखक, पं० उमरावसिंहजी जैन, अध्यापक स्याद्वादपाठशाला काशी। मू० पाँच आने। तत्त्वार्थ-सूत्रके 'मोक्षमार्गस्य नेतारं' आदि श्लोकपर स्वामी विद्यानन्दने आप्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परीक्षा नामका लगभग १२५ श्लोकोंका ग्रन्थ बनाया है। इसमें उक्त मंगलाचरणके श्लोककी विस्तृत व्याख्या की गई है और कपिल, बौद्ध आदि आप्तोंका अनाप्त ठहराकर जिनदेवको वास्तविक आप्त ठहराया है। यह न्यायका ग्रन्थ है। पं० उमरावसिंहजीने अच्छा किया जो इसे हिन्दी जाननेवालोंके लिए भी उपयोगी बना दिया। हम न्यायशास्त्र जानते नहीं हैं, इस लिए इस समालोचनाके अधिकारी नहीं, तो भी इतना कह सकते हैं कि अनुवाद साधारणतया अच्छा हुआ है। यदि मूलग्रन्थकर्ताके आशय और भी सरलतासे समझाये जाते, तो अच्छा होता। अनुवादमें कहीं कहीं भूलें भी रह गई हैं। दूसरे श्लोकके 'शास्त्रादौ मुनिपुङ्गवाः' का अर्थ 'तत्त्वार्थशास्त्रकी आदिमें उमास्वामिने' होना चाहिए। चौथे श्लोक, और १२३ वें श्लोकके अर्थमें भी इसी प्रकारकी भूल है। इन श्लोकोंका अर्थ हमने गताङ्कके इतिहासप्रसङ्गमें विस्तारसे किया है।

ब्रह्मचर्यदिग्दर्शन—लेखक, जैनमुनि ज्ञानचन्द्रजी। प्रकाशक, लाला फग्गूमल्ल जंगीमल्ल गुरुमहल, अमृतसर। मूल्य सदाचार। अनेक संस्कृत श्लोकों और प्राकृत गाथाओंको देकर लेखक महाशयने पुरानी पद्धतिसे ब्रह्मचर्यकी महिमा गाई है। भाषा अच्छी है। प्रकाशकोंसे मुफ्त मिल सकती है।

श्रीतीर्थक्षेत्रकुल्पाक— लेखक, वादी(?)मानमर्दनकार, भिषग्रत्न श्वेताम्बरजैनधर्मोपदेशक श्रीमान् बालचन्द्राचार्यजी महाराज (?)। प्रकाशक नेमीचन्द्रजी गोलेच्छा, रेसीडेंसी बाजार,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दक्षिण हैदराबाद । दक्षिण हैदराबादसे ४५ मील ईशानकी ओर कुल्पाक नामका कस्बा है । वह सिकन्दराबादसे बिजबाड़ेको जाने-वाली लाइनके आलेर नामक स्टेशनसे तीन मील दूर है । वहाँ पर एक विशाल मन्दिर है जिसमें ऋषभदेवकी ढाई हाथ ऊँची प्रतिमा है । इस प्रतिमाको माणिक्यस्वामी भी कहते हैं । इस प्रति-माका बड़ा भारी माहात्म्य है और इस कारण श्वेताम्बर सम्प्रदायमें यह पूज्य तीर्थ माना जाता है। इसी तीर्थको श्वेताम्बर सिद्ध करनेके लिए और इसकी ख्याति बढ़ानेके लिए यह पुस्तक लिखी गई है । लेखक महाशयका कथन है कि इस तीर्थको शङ्करगण नामके राजाने विक्रम संवत् ६८० के लगभग स्थापित किया था । परन्तु इसके लिए उन्होंने जो ऐतिहासिक प्रमाण दिये हैं वे १४ वीं शता-ब्दिके बादके हैं । वहाँ पर लगभग १९ शिलालेख हैं जिनमें एक वि० सं० १३३३ का है जो पूरा नहीं पढ़ा जाता है और शेष सब १४५० के पछिके हैं । जिनप्रभसूरिके 'तीर्थकल्प' नामक ग्रन्थमें इस तीर्थकी उत्पत्ति आदिका जो वर्णन दिया है वह भी विक्रमकी चौदहवीं शताब्दिका लिखा हुआ है । वह वर्णन बड़ा ही आश्चर्यजनक अतिरंजित और असंभव है । लिखा है कि " भरतचक्रवर्तीने अयोध्यामें मरकतमणिकी एक ऋषभदेवकी प्रतिमा प्रतिष्ठित की, कुछ समयके बाद विद्याधर उसे वेताढ्य पर्वत पर ले आये, वहाँ उसे नारदजीने देखा और उसका संवाद देवाधिराज इन्द्रको दिया, तब इन्द्रने उसे अपने विमानमें मँगवा लिया । नमिनाथके समय तक वह वहीं देवों द्वारा पूजी गई । इसके बाद मन्दोदरीने उसकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूजा करनेकी इच्छा की और इस हेतु अन्न जलका त्याग कर दिया। तब रावणने इन्द्रका आराधन किया। इन्द्रने प्रसन्न होकर प्रतिमा दे दी। मन्दोदरी प्रतिमाको बहुत समय तक पूजती रही, पीछे उसने उसे समुद्रमें रख दी। वहाँ देव उसे हज़ारों वर्षतक पूजते रहे। विक्रमसंवत् ६८० में कल्याण नगरमें शंकर नामका राजा राज्य करता था। उसके यहाँ एक व्यन्तरने महामारी रोग फैलाया। राजा चिन्तातुर था कि इतनेमें पद्मावतीने उसे स्वप्नमें कहा कि समुद्रमेंसे ऋषभ भगवान्‌की प्रतिमा लाकर पूजा करो, तो रोग शान्त हो जायगा। राजाने समुद्राधिपति देवका आराधन किया और उसने उक्त प्रतिमा दे दी। प्रतिमा राजाके पीछे पीछे शकट द्वारा आप ही आप चलने लगी। मार्गमें एक जगह राजाने पीछेकी ओर देख दिया तो प्रतिमा ठहर गई; तब राजाने वहीं एक मन्दिर बनवाकर उस प्रतिमाको प्रतिष्ठित कर दिया। प्रजाका रोग शान्त हो गया। पहले यह प्रतिमा अन्तरिक्षमें स्थित या अधर थी, परन्तु उस देशमें म्लेच्छोंका प्रवेश होनेसे वह सिंहासन पर जम गई! इस प्रतिमाको देवलोकसे मर्त्यलोकमें आये ११८०९०५ वर्ष हुए!! इस प्रतिमाके स्नानजलसे भीगी हुई मिट्टीको आँखमें आँजनेसे अन्धे सूझते हो जाते हैं, चैत्यके मूल मंडपमें केसरकी वर्षा होती है, जिससे यात्रियोंके वस्त्र कुछ कुछ रंग जाते हैं, प्रतिमाके सामने आते ही साँपका जहर दूर हो जाता है! इत्यादि।" सोमधर्मगणिके बनाये हुए 'उपदेश-सप्तति' नामक ग्रन्थमें भी कुलपाकतीर्थके स्थापन होनेका वृतान्त तीर्थ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्पके ही समान लिखा है और उसमें भी शंकर राजाको स्थापक बतलाया है; परन्तु यह ग्रन्थ तीर्थकल्पसे भी पीछेका अर्थात् वि० संवत् १९०३ का बना हुआ है। यह संभव है कि जो शंकरगण नामका राजा विक्रमकी सातवीं शताब्दिमें हुआ है, वही कुल्पाक-तीर्थका स्थापक हो और शायद वह जैन भी हो; परन्तु लेखक महाशय इसके लिए कोई यथेष्ट प्रमाण नहीं दे सके हैं। आपने यह तर्क भी उठाया है कि 'शंकर राजा किस जैन सम्प्रदायका था ?' और स्वयं ही उत्तर दे दिया है कि 'श्वेताम्बर सम्प्रदायका।' परन्तु इसके लिए भी कोई विश्वस्त प्रमाण नहीं दिया गया है। कुल्पाक-तीर्थकी प्रतिमायें शंकरराजाकी बनवाई हैं, इसका जब कोई प्रमाण नहीं है तब वहाँकी प्रतिमाओंके श्वेताम्बर होनेसे राजाको श्वेताम्बरत्व कैसे आ जायगा, यह समझमें नहीं आता। शंकर राजा श्वेताम्बर सिद्ध हो जाय, इसमें हमारी कोई हानि नहीं; परन्तु वह होना चाहिए प्रमाणसे। दक्षिण कर्नाटकमें जितने जैन राजा हुए हैं वे सब दिगम्बर सम्प्रदायके अनुयायी हुए हैं; श्वेताम्बर सम्प्रदायके उस तरफ़ प्रचलित होनेका कोई उदाहरण नहीं मिलता है। ऐसी दशामें शंकरके श्वेताम्बर होनेमें विशेष सन्देह है जिसके समाधान होनेकी बहुत आवश्यकता है। विज्जलराजाको लेखक महाशयने चालुक्य वंशीय लिखा है; परन्तु वास्तवमें वह कलचुरि या हैहयवंशीय था और चालुक्य 'तेल'के राज्यको छीनकर कल्याणके सिंहासन पर बैठा था। बसवपुराण और चैन्न बसवपुराणके पढ़नेसे निश्चय हो सकता है कि विज्जल श्वेताम्बर था या दि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गम्बर। पृष्ठ ३७ में लेखकने लिखा है कि "जितनी प्रतिमायें इस देशमें अर्ध पद्मासनस्थ हैं वे सभी श्वेताम्बरोंकी हैं।" बलिहारी! इस नियमसे तो आप दिगम्बरोंकी हज़ारों प्रतिमाओंको अपनी बना-लेंगे। क्योंकि दिगम्बर मन्दिरोंमें भी अर्ध पद्मासनस्थ प्रतिमाओंकी कमी नहीं है। पुस्तकके लिखनेमें यतिजी महाशयने इसमें सन्देह नहीं कि परिश्रम किया है; परन्तु हमारी समझमें आपके लिखनेका ढंग अच्छा नहीं है। आप इतिहास तो लिखते हैं; परन्तु आग्रह और पक्षपातको साथ रखते हैं। दिगम्बरसम्प्रदाय पर तो आपकी बड़ी कड़ी दृष्टि रहती है। इसके निदर्शनस्वरूप आप कुछ पुस्तकें भी लिख चुके हैं। हमारी प्रार्थना है कि आप श्वेताम्बर-दिगम्बरके पक्षको छोड़कर शुद्ध इतिहासकी आलोचना करें तो अच्छा हो। इतिहासप्रेमियोंको यह पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए। पुस्तक पर मूल्य नहीं लिखा।

जीवनचरित्र आचार्य श्रीमोतीरामजीका। लेखक, जैनमुनि पं० ज्ञानचन्द्रजी। प्रकाशक, लाला कुन्दनलाल चिरंजीलाल जैन मु० भुल्लरहेड़ी, नाभा स्टेट। स्थानकवासी जैनसम्प्रदायमें आचार्य मोतीरामजी नामके एक साधु हो गये हैं। वे अच्छे क्रियावान् और सुयोग्य उपदेशक थे। संवत् १८८० में उनका जन्म हुआ था और १९५८ में देहावसान। इस ६० पृष्ठकी पुस्तकमें उन्हींका जीवनचरित्र पुरानी पद्धतिसे लिखा गया है। पुस्तकका अधिकांश धर्मके स्वरूप और उपदेशसे भरा हुआ है, चरितका अंश बहुत ही थोड़ा है। महात्माओंके चरितोंमें उनके अन्तरंग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और बहिरंग भावोंका तथा आचरणोंका सूक्ष्म निरीक्षण होना चाहिए । पुस्तककी हिन्दी अच्छी है । साधारण श्रावकवर्ग इससे शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं । आधा आनेका टिकट भेजनेसे "लाला फत्तूराम जैन, सम्पादक जैनोदय, लुधियाना" इस पुस्तकको मुफ्त भेजते हैं ।

परीक्षामुख । लेखक और प्रकाशक, पं० घनश्यामदास जैन, धर्माध्यापक स्याद्वादविद्यालय, काशी । मू० छह आने । आचार्य-माणिक्यनन्दि स्वामीके प्रसिद्ध न्यायग्रन्थ परीक्षामुखका यह भाषानुवाद है । भाषा और भी सहज लिखी जाती और विषय और भी समझाकर लिखा जाता तो अच्छा होता, पाठकोंका अधिक उपकार होता । आप्तपरीक्षाकी अपेक्षा इसकी छपाई और कागज़ दोनों अच्छे हैं । स्वाध्यायप्रेमियोंको इसकी एक एक प्रति अवश्य मँगा लेना चाहिए और प्रकाशकके उत्साहको बढ़ाना चाहिए ।

हिन्दी शिक्षा, पहला भाग । प्रकाशक, मोहकमलाल मैनेजर, जैनशिक्षाप्रचारक कार्यालय, कूचा सेठ, देहली । मूल्य एक आना । जैनविद्यार्थियोंको हिन्दीकी शिक्षा देनेके अभिप्रायसे यह पाठ्य पुस्तक लिखी गई है । इसमें छोटे छोटे १७ पाठ हैं जिनमें तीन पाठ कविताके हैं । पाठ प्रायः सब ही अच्छे और शिक्षाप्रद हैं । भाषा भी साधारतः अच्छी है । पुस्तक सचित्र है । जो चित्र लीथोके छपे हुए हेर रंगके हैं वे यदि न दिये जाते तो हमारी समझमें पुस्तककी शोभा उलटी बढ़ जाती ।

उपदेशरत्नमाला । अनुवादक, विट्ठल विष्णु उर्फ रावजी भावे । प्रकाशक, सेठ मोतीलाल रावजी गांधी, शोलापुर । मूल्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आठ आने। यह उपदेशरत्नमाला नामक हिन्दी पुस्तकका भाषान्तर है, जिसकी समालोचना हितैषीमें पहले हो चुकी है।

समयसार नाटक। प्रकाशक, जैन औद्योगिक कार्यालय, चन्दावाड़ी, बम्बई। मूल्य आठ आना। कविवर बनारसीदासजीके समयसारकी यह नई आवृत्ति है। पुस्तकमें अशुद्धियोंकी भरमार है। संशोधनकी ओर ध्यान देना प्रकाशकका सबसे मुख्य कर्तव्य था। छपाई वगैरह अच्छी है।

सागारधर्मामृत (पूर्वार्द्ध)। अनुवादक, पं० लालारामजी अध्यापक, इन्दौर। प्रकाशक, शा मूलचन्द कसनदासजी कापड़िया, सूरत। मूल्य १॥ रु०। कापड़ियाजीने अब तक जितने ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं उनमें यही एक ग्रन्थ महत्त्वका निकला है। पं० आशाधार बड़े नामी विद्वान् थे। उन्होंने श्रावकाचारके ग्रन्थोंका अच्छी तरह मनन करके यह ग्रन्थ लिखा है। इसमें अनेक बातें ऐसी हैं जो दूसरे ग्रन्थोंमें नहीं मिलतीं। अनुवादकी भाषा सरल और प्रायः शुद्ध है।

स्थानकवासी जैन कान्फरेंस प्रकाशका खास अंक— स्थानकवासी जैन कान्फरेंसकी ओरसे एक साप्ताहिक पत्र निकलता है। पत्रकी मुख्य भाषा गुजराती है। कई लेख हिन्दीमें भी रहते हैं। डा० धारसी गुलाबचन्द संघाणी इसके सम्पादक हैं। वार्षिक मूल्य ढाई रुपया है। उसका यह खास अंक पर्युषणपर्वके उपलक्ष्यमें निकला है। जैनमित्रके आकारके लगभग १७५ पृष्ठ हैं। इसमें हिन्दीके २३, अँगरेजीके ५, मागधीका १ और गुजरातीके ६९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गद्यपद्य लेख और लगभग ९० चित्र हैं। इसके तैयार करानेमें ९००) नौ सौ रुपया खर्च हुए हैं। प्रत्येक कापीकी लागत ।।।=) है, परन्तु ग्राहकोंको मुफ्तमें और सर्वसाधारणको यह छह आनेमें दिया जाता है। सम्पादक महाशयका यह उद्योग और परिश्रम प्रशंसनीय है। पाठकोंको उनका उत्साह बढ़ाना चाहिए। कई लेख पढ़ने योग्य हैं। हितैषीके पाठकोंके परिचित लाला मुंशीलालजी एम, ए, बाबू चेतनदासजी बी. ए. और बाबू जुगमन्दरलालजी जजके भी इसमें चार लेख हैं। दो लेख किसी 'सत्यशोधक' नामधारी महाशयके हैं जो जैनसिद्धान्तभास्करके चन्द्रगुप्त और नग्नदार्शनिक साधु नामक लेखोंकी आलोचनास्वरूप हैं। यद्यपि लेखकके विचार कट्टर श्वेताम्बरी जान पड़ते हैं और उन्होंने जगह जगह दिगम्बर सम्प्रदाय पर अनुचित तथा अनावश्यक आक्षेप किये हैं तो भी उनके लेखोंमें बहुत कुछ तथ्य है। भास्कर सम्पादकको उनपर विचार करना चाहिए। चित्र प्रायः बने–ठने सजे-सजाये सेठ लोगोंके हैं जिनमें सादगीका नाम नहीं है। अच्छा है, जब तक इन लोगोंमें शिक्षाका प्रेम नहीं है, तबतक इनके चित्रादि प्रकाशित करके ही इनसे कुछ काम लिया जाय। कुछ चित्र ऐसे शिक्षित और सादे पुरुषोंके भी हैं जो इस सेठमय चित्रमालामें ग्रथित देखकर आपको शायद ही सौभाग्यशाली समझें।

हिन्दीहितैषी कार्यालय, देवरी (सागर) की नीचे लिखी दो पुस्तकें हमें समालोचनार्थ प्राप्त हुई हैः—

आदर्शचरितावली—लेखक, पं० शिवसहाय चतुर्वेदी। पृष्ठ संख्या ८०। मूल्य पाँच आने। इस पुस्तकमें जनरल बूथ, बुकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

टी. वाशिंगटन, गारफील्ड, लिंकन, विलसन, विद्यासागर, राणा प्रताप, रानडे, मालवीय, गाँधी, गोखले, राजा विनयकृष्ण, भरत, दधीचि, शिबि, इन १६ देशी विदेशी महापुरुषोंके शिक्षाप्रद चरित संग्रह किये गये हैं। पुस्तककी भाषा अच्छी और सरस है। ऐसी पुस्तकोंका जितना अधिक प्रचार हो, उतना अच्छा।

भारतीय नीतिकथा—महाभारत कथाओंका भाण्डार है। आदि पर्वसे उद्योग पर्वतक उसमें जितनी नीतिपूर्ण कथायें हैं, इस पुस्तकमें उन सबका सार आज कलके ढंगसे संकलन किया गया है। भीष्मकी पितृभक्ति और इन्द्रियदमन, अर्जुनकी एकाग्रता, जुआका भयंकर परिणाम, धर्मराजकी जीवदया आदि कथायें बड़ी अच्छी और शिक्षाप्रद हैं। इसके लेखक भी पूर्वोक्त पं० शिवसहायजी चतुर्वेदी हैं। मूल्य इसका बारह आने है। दोनों पुस्तकें उक्त कार्यालयसे मँगाना चाहिए।

वीराङ्गना अर्थात्, रूपनगरकी राजकन्या चञ्चलकुमारीका सच्चा ऐतिहासिक वृत्तान्त। रचयिता व प्रकाशक, ज्ञानचन्द्र, बटाला (गुरुदासपुर)। मूल्य छह आने। राजपूतानेमें रूपनगर एक छोटासा राज्य था। बादशाह औरंगज़ेबने रूपनगरके राजाकी कन्या चञ्चलकुमारीसे शादी करनी चाही। राजा तो राजी हो गया, परन्तु चञ्चल राजी न हुई। उसने अपनी रक्षाके लिए महाराणा राजसिंहकी सेवामें पत्र भेजकर उन्हें उत्तेजित किया और तब राजसिंहने बादशाहकी सेनासे लड़कर चंचलकुमारीको छुड़ा लिया और उसके साथ स्वयं विवाह कर लिया। इस ऐतिहासिक घटनाको

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लेकर स्वर्गीय बाबू बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्यायने 'राजसिंह' नामक उपन्यासकी रचना की है। यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि ऐसे उपन्यासोंमें लेखक दो चार प्रधान ऐतिहासिक घटनाओंकी रक्षा करके शेष सारी बातें अपनी कल्पनासे लिखता है। अपनी रचनाको सरस, प्रभावोत्पादक बनानेके लिए वह नये नये पात्रोंकी स्थानोंकी, प्रसङ्गोंकी कल्पना करनेमें ज़रा भी कुण्ठित नहीं होता है। तदनुसार 'राजसिंह' में भी कल्पनाप्रसूत बातोंकी कमी नहीं है। यह पुस्तक उक्त उपन्यासको ही संक्षिप्त करके लिखी गई है; परन्तु लेखक महाशयने इसे 'सच्चा ऐतिहासिक वृत्तान्त' समझ लिया है और यह लिखनेकी भी आवश्यकता नहीं समझी है कि 'राजसिंह'के आधारसे इसकी रचनाकी गई है! पहला भ्रम है और दूसरा अपराध है। आशा है कि लेखक महाशय आगे इन ग़लतियोंको सुधार लेंगे। कोई भी 'ऐतिहासिक वृत्तान्त' और सो भी 'सच्चा' उपन्यासोंपरसे नहीं लिखा जा सकता, इसके लिए टाड राजस्थान जैसे इतिहासग्रन्थ ही उपयोगी हो सकते हैं। पुस्तक अच्छी, देशाभिमानको जागृत करनेवाली, और शिक्षाप्रद है; भाषा भी बुरी नहीं है। स्त्रियोंको खास तौरसे पढ़ना चाहिए।

शारदाविनोद—यह एक मासिकपत्र है। शारदाभवन पुस्तकालय, दीक्षितपुरा जबलपुरसे प्रकाशित होता है। हितैषीके साइजके ५० पृष्ठ रहते हैं। वार्षिक मूल्य डेढ़ रुपया है। अबतक इसके तीन अंक निकल चुके हैं। इसमें छोटी छोटी मनोरंजक और शिक्षाप्रद गल्पें प्रकाशित हुआ करती हैं। कोई कोई गल्प बहुत अच्छी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होती है। हिन्दीमें अपने ढंगका यह एक ही पत्र है, पर इसका बहिरंग आकर्षक नहीं है। छपाई सफ़ाईमें उन्नति करनेकी आवश्यकता है।

चुटकुले। लेखक, श्रीयुत शर्मा। प्रकाशक, एंग्लो ओरियंटल प्रेस, लखनऊ। मूल्य पाँच आने। अच्छी पुस्तक है। इसमें २०५ चुटकुलोंका संग्रह है। चुटकुले केवल हँसानेवाले या जी खुश करनेवाले ही नहीं हैं, उनमें अच्छी अच्छी शिक्षायें भी भरी हुई हैं। असभ्यता या अश्लीलताकी इसमें गन्ध भी नहीं है जिसके लिए मनोविनोदकी पुस्तकें बदनाम हैं। सामाजिक सुधारके उद्देश्यसे कहीं कहीं कटाक्ष भी किये गये हैं जो विशेष उग्र नहीं हैं। चुटकुलोंमें बड़ी भारी विशेषता यह है कि वे प्रायः लेखकके निजके हैं और बीरबलविनोद आदिसे उड़ाये हुए नहीं हैं। ये सब पहले नागरीप्रचारक और अवधवासीमें छप चुके थे, अब पुस्तकाकार प्रकाशित किये गये हैं। विनोदप्रिय पाठकोंको इस पुस्तकका संग्रह अवश्य करना चाहिए।

उत्तररामचरित नाटक। अनुवादक, पं० सत्यनारायण शर्मा, कविरत्न। प्रकाशक, भारतीभवन, फीरोजाबाद (आगरा)। मूल्य बारह आने। संस्कृतसाहित्यमें महाकवि भवभूति अपनी कीर्ति अमर कर गये हैं। कालिदासके बाद काव्यरचनामें भवभूतिका ही नाम लिया जाता है। उनका उत्तररामचरित बहुत ही प्रसिद्ध नाटक है। यह पुरुषोत्तम रामचन्द्रजीके राज्यारूढ होनेके बादके कथानकको लेकर रचा गया है। इसमें करुणरसकी प्रधानता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसके तीसरे अंकको पढ़कर तो पाषाणहृदय भी द्रवित हो जाता है। जहाँतक हम जानते हैं, अभी तक हिन्दीमें इसका कोई अनुवाद नहीं हुआ था। पं० सत्यनारायणजीने यह सुन्दर अनुवाद करके बड़ा काम किया। अनुवाद गद्यका गद्यमें और पद्यका पद्यमें किया गया है। पद्यरचना व्रजभाषामें की गई है जिस पर कविरत्न महाशयका पूरा अधिकार जान पड़ता है। हिन्दीके शब्दोंको तोड़मरोड़ करके जिस व्रजभाषाका उद्धार आजकलके बहुतसे कवि कर रहे हैं उस व्रजभाषासे आपकी व्रजभाषा भिन्न है। आपकी रचना शुद्ध व्रजभाषामें है। रचना बड़ी ही प्यारी और भावपूर्ण है। एक नमूना लीजिए। लक्ष्मणजी रामचन्द्रजीको शोकाकुलित देखकर कहते हैं:—

तुव नयन सन टपकत टपाटप यह लगी असुअन झरी,
बिखरी खरी भुअपै परी जनु टूट मुतियनकी लरी।
रोकत यदपि बलसों विरहकी वेदना उर तउ भरै,
जब अधर नासापुट कँपहिं अनुमानसों जानी परै॥

कविजीका गद्यानुवाद उतना अच्छा नहीं है जितना कि पद्यानुवाद है। बहुत कम लोग ऐसा भावपूर्ण पद्यानुवाद कर सकते हैं। पर हमें आशा नहीं कि वर्तमान खड़ी-बोली-पूर्ण हिन्दी संसारमें कविरत्न महाशयके परिश्रमका जितना चाहिए उतना आदर होगा। आजकलके शिक्षितोंके लिए अब व्रजभाषा एक अपरिचित भाषा होगई है—खास तौरसे अध्ययन किये बिना उनके लिए उसका समझना कठिन है। कविरत्न महाशयने व्रजभाषाकी रचनामें जो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिश्रम किया है यदि वही परिश्रम खड़ी बोलीकी रचनामें करते तो हिन्दीभाषाभाषियोंका और भी अधिक उपकार होता। पुस्तकके प्रारंभमें २९ पृष्ठकी विस्तृत भूमिका है जिसमें भवभूति, उनकी रचना, और इस नाटककी विशेषताओंका विवेचन किया गया है। भूमिकाके पढ़नेसे भवभूतिके और उनके ग्रन्थोंके सम्बन्धमें अनेक जानने योग्य बातोंका ज्ञान होता है। पुस्तक सब तरहसे अच्छी और संग्रहणीय है। साहित्यप्रेमियोंको इसकी एक एक प्रति मँगाकर प्रकाशकोंके उत्साहको बढ़ाना चाहिए।

आत्मतत्त्वप्रकाश। अनुवादक, पं० ज्वालादत्त शर्मा, किसरौल (मुरादाबाद)। प्रकाशक, लाला गणेशीलाल लक्ष्मीनारायण मुरादाबाद। यह पुस्तक महामहोपाध्याय डा० सतीशचन्द विद्याभूषण एम. ए., पी. एच. डी. के एक बंगला निबन्धका अनुवाद है। पुस्तक बड़े महत्त्वकी है। प्रारंभके ३४ पृष्ठोंमें भारतीय दर्शनशास्त्रोंका इतिहास है जो बड़ी खोजसे लिखा गया है और फिर आत्मा, जन्मांतरवाद, ईश्वर आदिके सम्बन्धमें भारतीय दर्शन शास्त्रोंके सिद्धान्त लिखे गये हैं। विद्वानोंको ऐसी पुस्तकोंका अवलोकन अवश्य करना चाहिए। मूल्य पुस्तकपर लिखा नहीं, लगभग चार आने होगा।

फ़िजी द्वीपमें मेरे इक्कीस वर्ष। लेखक, पं० तोताराम सनाढ्य। प्रकाशक, भारती भवन, फीरोजाबाद (आगरा)। मूल्य छह आने। लेखक महाशयने इसमें आपबीती कहानी लिखी है। आप आरकाटियोंके हाथमें पड़कर जबर्दस्ती फिजीद्वीपमें भेज दिये गये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

थे। कुली बनकर वहाँ आपको २१ वर्ष तक रहना पड़ा और अगणित यातनायें सहनी पड़ीं। आपको और आपके साथी दूसरे भारतवासियोंको वहाँ जो असह्य दुःख दिये गये थे, उनका इस पुस्तकमें बड़ा ही रोमाञ्चकारी वर्णन है। प्रत्येक भारतवासीको इसका पाठ करके अपने भाइयोंको उन दुःखोंसे बचानेका यत्न करना चाहिए। फ़िज़ीद्वीपसम्बन्धी और भी अनेक जानने योग्य बातोंका इसमें उल्लेख किया गया है। ऐसी पुस्तकोंकी लाखोंकी संख्यामें छपकर वितरण होनेकी ज़रूरत है।

मा और बच्चा। अनुवादक और प्रकाशक, म० गोवर्धन बी. ए. सम्पादक 'प्रह्लाद', देहली। मूल्य आठ आने। यह 'एमिली' नामक फ्रेंच ग्रन्थके पहले खण्डका अँगरेज़ीपरसे किया हुआ अनुवाद है। पुस्तक बहुत ही अच्छे विचारोंसे परिपूर्ण है; परन्तु खेद है कि अनुवादकी भाषा ठीक नहीं। वाक्यरचना बड़ी ही गुड्डुल और अँगरेज़ी ढंगकी है। ऐसा मालूम होता है कि मूल पुस्तकका शब्दशः अनुवाद किया गया है। इस दोषके होनेपर भी हम अपने विचारशील पाठकोंसे इस पुस्तकके पढ़नेकी सिफारिश करते हैं। छोटे छोटे बच्चोंके पालनपोषण, शिक्षण, शरीररक्षण आदिके सम्बन्धमें उन्हें इस पुस्तकमें बड़ी ही अनोखी बातें मिलेंगीं।

नवजीवन। यह एक मासिक पत्र है। पहले यह बनारससे पं० केशवदासजी शास्त्रीके द्वारा सम्पादित होकर निकलता था; परन्तु शास्त्रीजीके अमेरिका चले जानेसे बन्द हो गया था। अब इसे बाबू द्वारकाप्रसादजी (सेवक) ने अपने हाथमें लिया है और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बड़े उत्साह तथा परिश्रमसे सम्पादन करना शुरू किया है । अब तक इसके छह अंक निकल चुके हैं । आकार सरस्वतीके जैसा है, एक दो चित्र भी रहते हैं । यद्यपि सेवकजी आर्यसमाजी हैं, परन्तु उनके विचारोंमें अन्य समाजी भाइयों जैसी कट्टरता नहीं है । वे अपने पत्रमें सब प्रकारके अच्छे विचारोंको स्थान देते हैं । देश-हितकी ओर उनका विशेष लक्ष्य है । छट्ठे अंकमें श्रीयुक्त बाबू अर्जुनलालजी सेठी बी. ए. का चित्र प्रकाशित किया गया है । इसके पहलेके अंकोंमें भी सेठीजीके विषयमें कई नोट निकल चुके हैं । सम्पादक महाशय जैनधर्मसम्बन्धी लेखोंको भी प्रकाशित करनेकी इच्छा रखते हैं । 'मैनेजर, नवजीवन, सरस्वतीसदन, केम्प इन्दौर' के पतेसे पाँच आनेके टिकट भेजनेसे पत्रका नमूना मिल सकता है । वार्षिक मूल्य तीन रुपया है ।

नीचे लिखी पुस्तकें भी सादर स्वीकार की जाती हैं:—

१ सदाचारप्रश्नोत्तरी—बाबू नारायणप्रसाद अरोड़ा, कानपुर ।

२ नई रोशनीकी कुलदेवी—बी. पी. सिंघी, सिरोही (राजपूताना)

३ बालशिक्षा—दिगम्बर जैन आफिस, सूरत ।

४ रिपोर्ट सं० १९६७—७०—श्वेताम्बर जैन कान्फरेंस, बम्बई ।

५ रिपोर्ट (सन् १९१३—१४)—जैन बोर्डिंग स्कूल, रतलाम ।

६ द्विवार्षिक रिपोर्ट (सं० १९६८—६९)—जैनबालाश्रम, पालीताना ।

७ रिपोर्ट (१९१४—१५)—स्याद्वादमहाविद्यालय, काशी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ रिपोर्ट (१९११–१९) श्राविकाश्रम, मुरादाबाद ।

९ अनित्यादिभावनास्वरूप–लेखक, मुनि प्रतापविजयजी । प्रकाशक, मानचन्द बेलचंद, गोपीपुरा, सूरत ।

१० बालबोध जैनधर्म मराठी ३ रा ४ था भाग–अनुवादक और प्रकाशक, रावजी सखाराम दोशी, शोलापुर ।

११ हिन्दी भक्तामर और प्राणप्रिय काव्य
१२ रूपसुन्दरी (गुजराती)
१३ श्राविका सुबोध (,,)
} प्रकाशक, मूलचन्द कशनदासजी कापड़िया, सूरत ।

१४ लघु अभिषेक–प्रकाशक, डाह्याभाई शिवलाल, करमसद (खेड़ा)

१५ हिन्दीजैन शिक्षा, द्वितीय भाग–लेखक और प्रकाशक, सेठ लक्ष्मीचन्दजी घींया, प्रतापगढ़ (मालवा) ।

१६ श्रीमदात्मानन्दजीका संक्षिप्त जीवन–प्रकाशक, आत्मानन्द जैनसभा, अम्बाला शहर ।

१७ रिपोर्ट (१९६९–७०) दिगम्बर जैनपाठशाला, कुंथलगिरी ।

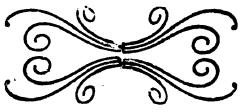

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विविध-प्रसङ्ग।

१ बालक भट्टारक और शेतवाल पंचोंका प्रयत्न।

गत अंकमें हमने लातूरके भट्टारककी गद्दीके सम्बन्धमें एक नोट लिखा था। उसके सम्बन्धमें शेतवाल समाजके एक प्रतिष्ठित सज्जन श्रीयुत नेमिनाथ अनन्तराज पांगलका पत्र हमारे पास आया है। वे लिखते हैं कि "आपने अपने नोटमें जो यह लिखा कि लातूरकी गद्दीपर एक बालक बिठा दिया गया है, सो ठीक नहीं है। वास्तविक बात यह है कि अपनेको 'पण्डित' कहलवानेवाले एक रामभाऊ नामक व्यक्तिने स्वर्गस्थ भट्टारक विशालकीर्तिजीके बाकायदा नियत हुए पंचोंकी सम्मति लिये बिना ही, केवल भोले लोगोंको ठगनेके लिए एक अज्ञान बालकको गद्दीपर बिठानेका फार्स किया है—बिठाया नहीं है। परन्तु यथार्थमें वह बालक और ब्रह्मचारी कहलानेवाले रामभाऊ न हमारे समाजके गुरु हैं और न उनमें गुरुके कोई लक्षण ही हैं। इन दोनोंको शेतवाल समाजका एक बहुत बड़ा भाग पूज्य माननेसे इंकार करता है और अब तो उन पर स्व० विशालकीर्ति भट्टारककी गद्दीके पंचोंने कोर्टमें मुकद्दमा भी दायर कर दिया है। सारांश, उक्त अज्ञान अशिक्षित लड़का हमारे समाजका भट्टारक नहीं है और हम उसे वैसा मानते भी नहीं हैं।" इसमें सन्देह नहीं कि गद्दीके पंचोंका प्रयत्न बहुत ही प्रशंसनीय है और हमें आशा है कि वे उसमें पूरी पूरी सफलता लाभ करेंगे। क्या हमारे गुजराती भाई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भी इन पंचोंका अनुकरण करेंगे और अपने प्रान्तके ऐसे ही भट्टारकों द्वारा लुटते हुए भोले भाइयोंकी रक्षा करनेका पुण्य सम्पादन करेंगे? यदि बाकायदा प्रयत्न किया जाय और कुछ प्रतिष्ठित पुरुष भी इस प्रयत्नमें योग देवें, तो जितने अयोग्य असदाचारी भट्टारक हैं वे सरकारकी आज्ञासे बहुत जल्दी निकलवा दिये जा सकते हैं। जिस तरह चोर और डकैतोंसे प्रजाकी रक्षा करना सरकारका कर्तव्य है उसी प्रकार धर्म-चोरों और ठगोंसे बचाना भी वह अपना कर्तव्य समझती है, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं है।

२ त्यागी मन्नालालजीकी मालकी पेटियाँ।

गत अंकमें हमने 'तेरहपंथियोंके भट्टारक' शीर्षक नोटमें पं० मूलचन्दजीके कथनानुसार लिखा था कि त्यागी मुन्नालालजीकी एक पेटीमें जिसे वे किसी गाँवके मन्दिरमें रख गये थे दो हज़ार रुपयेके नोट निकले। इस विषयमें जैनमित्रके दफ़्तरमें छारोरा और मूंगावलीके पंचोंकी सहीसे दो पत्र आये हैं। मूंगावलीवाले लिखते हैं—"गत वैशाखवदी १३ को ऐलक पन्नालालजी मूंगावली आये थे। उन्होंने दूसरे दिन बाजारके मंदिरमें त्यागी मन्नालाल-जीकी रक्खी हुई पेटियाँ खुलवाई। देखा तो ३ पेटियोंमें और ३ कनस्तरोंमें शास्त्र भरे हुए थे। एक पेटी कपड़ोंसे भरी हुई थी। २ कैंचियाँ, १ लोटा, २ पीतलके कमंडल, १ चंदोबा, २ कुरते चिकन और कश्मीराके, १ मच्छरदान, २ पिछौरा, २ मखमलके टुकड़े, रेशमी छींट २ गज, १ तकिया, १ पीतरकी पीछी, मोरके पंख २॥ सेर, १ चमचा, १ कटोरी, १ खुरजी, १ सदरी, १ कुरता, १ गामठीकी दुहर, ३ मलमलके टुकड़े, ३ लट्ठेके टुकड़े, धूमास १ हाथ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ मलमलके पिछौरा, १० लेम्पकी बत्तियाँ ५ गज, १० मोमबत्तियाँ, १ बहुत बढ़िया लालटेन, १० छटाया (?), १ छाता, कुछ फुटकर चीजें, इस तरह सामान निकला। इनकी पेटियाँ भेलसा, रतलाम, चँदेरी, चन्दरादिमें भी पड़ी हैं। एक जगह एक घड़ी १० रुपयेमें गिरवी रक्खी थी। इनका चरित्र हमारे देशमें सब अच्छी तरहसे जानते हैं। ये परदेशसे चीजें ला-लाकर अपने भाईको भेजते हैं।" छारोरावाले लिखते हैं—"यहाँ ऐलकजी वैशाखवदी ७ को पधारे। उन्होंने मुन्नालालजीकी पेटियाँ खुलवाईं। उसमें १ घड़ी आफिस क्लाक, ३ घड़ियाँ जर्मन सिलवरकी, १ घड़ी चाँदीकी, १ चशमा, १ लोटा, १३ पिछौरा, २ मच्छरदानी, ४ टुकड़े गजीके, २५ सुइयाँ, १० तागे गोटेके, २ डिब्बियाँ मोती वगैरहकी खाक, २ शीशी पौष्टिक दवाइयोंकी, २ चमचे, १ कमंडलु तांबेका, १ बालटी, १ बेलन, १ गठी (?), १ झारी, १ काच, १ खुरजी, केशर ५ तोला, १ सवरानी(?), १५ मलमलके पिछौरा, ४ साटनके चंदोबा, ४९॥)रुपये नक़द। ये सब चीजें दो पेटियोंमें थीं। शेष पाँच पेटियाँ शास्त्रोंसे भरी हुई थीं।" इन दोनों चिट्ठियोंमें लिखा है कि जैनहितैषीमें जो समाचार प्रकाशित हुआ है, वह असत्य है—सत्य तो यह है, जो हम लिखते हैं। इस पर हमारा निवेदन यह है कि पं० मूलचन्दजीने जो दो हज़ार रुपयेके नोटोंकी बात कही थी, संभव है कि उन्होंने बढ़ाके कही हो। वे स्वयं भी एक प्रकारके त्यागी हैं और भट्टारकके शिष्य हैं, इसलिए कुछ आश्चर्य नहीं जो अपने सहव्यवसायीको अधिक नीचा दिखलानेके लिए उन्होंने उक्त बात स्वयं ही गढ़ ली हो। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि क्षुल्लक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुन्नालालजीने अपने वेष और त्यागको रुपया कमानेका ही जरिया बना रक्खा है। मूंगावली और छारौराकी पेटियोंके समान और न जाने कहाँ कहाँ उनकी पेटियाँ रक्खी होंगीं। उनमें दो हज़ारके नोट भले ही न हों; परन्तु माल तो दो हज़ारसे कमका न होगा। जब उक्त पेटियोंमें भरे हुए शास्त्र बेचे जावेंगे, तब क्षुल्लकजीके कुटुम्बका दरिद्र दूर हो जायगा! आशा है कि हमारे भोलेभाई अब ऐसे त्यागी महात्माओंसे सावधान रहेंगे। इनके बाहरी आचरणको देखकर ही भक्तिगद्गद न हो जाना चाहिए, इनके भीतर भी टटोलना चाहिए कि क्या है।

३ बिनैकया भाइयोंका प्रार्थनापत्र।

गत मार्गशीर्षमें भोपाल स्टेटके बाड़ी मुकाममें एक बिम्बप्रतिष्ठा हुई थी। उसमें जैनहितैषिणी सभा नरसिंहपुरके कुछ उत्साही सभासद और पं० दीपचन्दजी परवार गये थे। उक्त प्रान्तमें अज्ञानान्धकार फैला हुआ है। हज़ारों आदमी ऐसे हैं जो यह नहीं जानते कि सभा क्या चीज़ है। इन सज्जनोंने किसी तरह सभा आदिका प्रबन्ध किया और चार दिनतक खूब व्याख्यान दिये। व्याख्यानोंका प्रभाव पड़ा और एक पाठशाला खोलनेके लिए २९०रु० वार्षिक चन्दा हो गया। एक दिनके व्याख्यानमें पं० दीपचन्दजीने कहा कि जैनधर्म जीवमात्रका धर्म है। नीच ऊँच आदि सभी उसको पालन कर सकते हैं। चाण्डालोंने भी इस धर्मको धारण करके स्वर्गप्राप्ति की है। इसलिए इसका प्रचार सर्वत्र करना चाहिए। इत्यादि। जिस दिन यह व्याख्यान हुआ उसी दिन वहाँके कुछ बिनैकया भाइयोंने एक प्रार्थनापत्र पण्डितजीके हाथमें दिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिसका अभिप्राय यहाँ प्रकट किया जाता है। आशा है कि इससे दस्साओंके धार्मिक अधिकार छीननेवाले बीसाओंका तथा हमारे परवार भाइयोंका हृदय थोड़ा बहुत अवश्य पसीजेगा;—

"मान्यवर पण्डितजी, आपका व्याख्यान सुनकर शान्ति मिली और आशा हुई कि आप हमारी प्रार्थनाको अवश्य सुनेंगे।

"हम लोग बिनैकया (दस्सा) हैं। किसी समय हमारे पुरखाओंसे कोई अनाचार बन गया होगा जिसका फल हम लोग कई पीढ़ियोंसे भोग रहे हैं। पर उस पापका अन्त अब तक नहीं आया है, इस लिए हमारे परवार भाई हमें मंदिरजीमें नहीं आने देते हैं और हम लोग पशुओंके समान बिना जिनदर्शन किये ही पेट भरते हैं। माना कि हमारे पुरखाओंने कोई अनाचार सेवन किया होगा; परन्तु क्या परवार भाइयोंमें सारे ही स्त्री पुरुष सीता और रामचन्द्रके तुल्य हैं? हम लोग ग़रीब हैं, हमारी ओर कोई बोलनेवाला नहीं; नहीं तो हम पचासों स्त्रीपुरुषोंके दुश्चरित्र सुना दें; पर वे धनी हैं और मन्दिरपर उनका पट्टा लिखा हुआ है, इसलिए उन्हें कौन रोक सकता है? क्या धर्मका न्याय यही है कि हम लोग तो अपने पुरखाओंके पापोंका प्रायश्चित्त भोगें और ये अपने ही अनाचारोंका फल न भोगें? अस्तु, हमें इनके कर्मोंसे कोई मतलब नहीं। हम न इनके साथ भोजन करनेको लालायित हैं और न इनके साथ बेटीव्यवहार ही करना चाहते हैं। हम तो सिर्फ भगवान्‌के दर्शन और पूजनका अधिकार चाहते हैं। आप बड़े हैं, पण्डित हैं, इन दोनों कामोंके करनेकी रोक टोक मिटवा दीजिए।

"आपकी दृष्टिमें हम पतित हैं, तो क्या कड़िया, लुहार, बढ़ई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माली, काछी, चितेरा आदि जातियोंसे भी गिरे हुए हैं जो श्रीजीकी वेदीतक जाते हैं? ये लोग शूद्र हैं, पर हम लोग आपहीके खून हैं, एक ही पिताके सन्तान हैं और जब कि हम लोग अनाचार सेवन नहीं करते हैं तब उनसे अच्छे क्यों नहीं हैं जो निरन्तर व्यसनोंमें आसक्त रहकर भी मन्दिरोंमें आते जाते और जातिके अगुए कहलाते हैं? इतने पर भी यदि हम पतित हैं तो क्या पतितोंका प्रायश्चित्त नहीं होता है? क्या पतित पावन नहीं हो सकते हैं? यदि नहीं तो भील, चोर, चाण्डालादि शुभगतिको कैसे प्राप्त हो गये?

" यदि सचमुच ही अब हम पावन या शुद्ध नहीं हो सकते हैं, तो लाचारी है। आप हमें मत मिलाइए, जिनदेवका दर्शन पूजन मत करने दीजिए, परन्तु कृपाकरके यह तो बतला दीजिए कि हम पीर पैगम्बर, क्राइस्ट, बुद्ध, विष्णु, चण्डी, भवानी आदि किसकी पूजा करें और किस धर्मके उपासक बन जायँ, जिससे आपका नित्यका काँटा निकल जाय और हम कई हजार बिनैकयोंके निकल जानेसे आप लोग हलके हो जायँ, आपके धर्मकी उन्नति हो जाय।

" जब कुँअर दिग्विजयसिंहजी जैन हुए, तब सारा जैनसमाज आनन्दसे नृत्य करने लगा; परन्तु जब हमारे हजारों भाई जैनधर्मसे विमुख हो जायँगे, तब शायद किसीके कानोंपर जूँ भी न रेंगेगी। क्या उन्नतिकी उपासना इसीको कहते हैं कि एक नया जैन बनानेमें तो गजों ऊपर उछलें और हजारों जैनोंको अजैन बननेके सम्मुख देखकर एक आह भी मुँहसे न निकालें? स्थितिकरण अंगका स्वरूप क्या यही है कि गिरते हुएको एक और जोरका धक्का लगा देना?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

" अन्तमें निवेदन है कि हमें इस पत्रका उत्तर अवश्य दिया जाय, जिससे हम लोग किसी ठिकानेसे लग जायँ । इस समय तो हमारी बड़ी ही दुर्दशा है । इधर आप लोग हमें पास नहीं आने देते हैं और उधर दूसरे लोग हमें जैन समझते हैं । इस तरह हम दोनों ओरसे धक्के खा रहे हैं । क्षमा कीजिए, हम लोगोंने जो इतना कहनेका साहस किया है, सो इसका कारण केवल हमारे शरीरमें होनेवाला आपके खूनका प्रवाह और पवित्र धर्मका प्रेम है।"

४ भारतकी दरिद्रता ।

कुछ दिन पहले धूलियावाले सेठ गुलाबचन्दजीके व्याख्यानकी समालोचनामें सेठ हीराचन्द नेमीचन्दजीने सोने चाँदीकी आमद-रफ्तका हिसाब बतलाकर प्रकट किया था कि भारत दरिद्र नहीं, किन्तु धनी होता जा रहा है । सेठजीके इस बड़े भारी भ्रमको दूर करनेके लिए हमारे सुयोग्य मित्र श्रीयुत संशोधकजीने एक अर्थ-शास्त्र सम्बन्धी लेख लिखकर भेजा है जो अन्यत्र प्रकाशित किया जाता है । आशा है हमारे पाठक उसे ध्यानसे पढ़ेंगे और इस प्रश्नकी सब बाजुओंको अच्छी तरहसे समझ लेंगे । भारत पहले बहुत बड़ा धनी था, पर अब यहाँके लोगोंकी दशा दिन पर खराब होती जाती है । इस बातको श्रीमती एनी विसेन्टने अपने 'इंग्लैंड और भारतवर्षके निकट वर्ग' विषयक व्याख्यानमें स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया है । व्याख्यानका उक्त अंश हम सहयोगी प्रतापके अनुवादमेंसे यहाँ उद्धृत किये देते हैं:—

"एक मुसलमान सरदारके पांच मन जवाहिरात लेनेका उल्लेख भारतके इतिहासमें है । आज यह बात आपको पुराणोंकी कथा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ओंकी तरह मालूम पड़ती है, लेकिन यह बात सच्ची है, उस समय हिंदुस्तान देश ऐसा ही सम्पत्तिवान् था। सत्रहवीं शताब्दिमें मुगल बादशाहोंने कुछ दीन दरिद्र यूरोपियन व्यापारियोंको शान्तिसे व्यापार करनेकी आज्ञा दी। उन्होंने व्यापार करते करते पहिले भूमि मोल ली और फिर गांव और नगरों पर क़ब्ज़ा किया। इस प्रकार युरोपके समस्त राष्ट्र हिन्दुस्तानकी सम्पत्तिके लिए झगड़ने लगे। व्यापारी कंपनियोंको राजाओंसे सनदें मिलीं और वे कंपनियां यहां आकर व्यापार करने लगीं। फ्रेंच और अंगरेज़ोंका आगमन हुआ, मिश्नरियोंने श्रीरामपुरमें कालेज स्थापित किया। इतने पर भी अठारहवीं शताब्दिके अर्द्ध भाग बीतनेतक हिंदुस्तान धनाढ्य था। बस, इसके बाद भारतकी लक्ष्मीकी अच्छी तरहसे लूट आरम्भ हो गई। अंगरेज़ोंकी सत्ताधीशतामें कम्पनी सरकारका राज्य चला और द्रव्यकी धारा इंगलैण्डकी ओर बह चली। उस समय ख़ैरियत इतनी ही थी कि हर बीसवें वर्ष कम्पनीको अपनी सनद बदलवानी पड़ती थी और पार्लिमेंट सभामें इस बातकी जांच होती थी कि भारतकी तात्कालिक दशा अच्छी है वा नहीं। इस जांचका परिणाम यह हुआ कि पार्लीमेंटको यह मालूम होगया कि भारत दिनों दिन ग़रीब होता जा रहा है और अन्तमें कंपनी सरकारके हाथसे राज्य निकल गया, तथापि आज निम्न समुदायकी दशा कैसी गिरी हुई है, इसे देखिए।

"यदि भारतके वृद्ध पितामह दादाभाई नवरोजीके विषयमें कहा जाय कि उन्होंने भारतकी दरिद्रताका ज्ञान प्राप्त करनेमें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अपनी सारी आयु बिता दी है; तो भी अत्युक्ति न होगी। दादा भाई कहते हैं कि यहांके हर मनुष्यके वार्षिक आयकी औसत बीस रुपये है। लार्ड क्रोमर इसे सत्ताइस बताते हैं। यदि क्रोमर साहबहीकी बात सत्य मान ली जाय, तो भी यह जो सत्ताइस रुपये प्रति मनुष्यकी एक वर्षकी आयके रक्खे गये हैं, उनमें मिलोंके मालिकों और बड़े बड़े व्यापारियोंकी आमदनी भी जुड़ी हुई है। किसानोंकी सच्ची स्थिति देखी जाय तो सालमें आठ मास उन्हें भोजन मिलता है। शेष चार महीने उन्हें महाजनोंसे कर्ज़ उधार लेकर बिताने पड़ते हैं। यह बम्बई प्रदेशके कृषकों-की दशा है और यह शोचनीय स्थिति दिनों दिन और ख़राब होती जा रही है।"

५ बिना अन्नके पच्चीस दिनतक जीता रहा।

कई महीने हुए इटलीमें जो भूकम्प आया था उसके विषय-में बहुतसी कहानियां सुनी जाती हैं। इस विषयमें अभी एक नई बात मालूम हुई है। माइकल कैओलो Miecael caiolo नामका एक मनुष्य पच्चीस दिनोंतक अन्धकारमें भूखा पड़ रहनेके बाद जीता लौट आया है। उसका कहना है कि ज्योंही उसे कुछ धक्कासा लगा, वह समझ गया कि भूकम्प आरहा है। भागकर वह एक अस्तबलमें छिप रहा, परन्तु भूकम्पके वेगसे घर गिर गया और उसीके साथ अस्तबल भी ढल पड़ा। बेचारा कैओलो उसीके नीचे दब गया। उससे बाहर निकलनेको कहीं राह न मिली। विवश हो वहीं पच्चीस दिनोंतक अन्धेरेमें भूखा पड़ा रहा। परन्तु भाग्यवश एक नलके टूट जाने-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से उसके पास बहकर पानी आता रहा । वही पानी पीता था और सो रहता था । हिलने डोलनेकी उसे जगह न थी ।

इतने काल तक वह कैसे जीता रहा ? यदि हम अपना शरीर बिल्कुल स्थिर रक्खें, तनिक भी न हिलें डोलें तथा ऐसी जगहमें पड़े रहें जहां गरमी न घटे न बढ़े और पानी पीनेको मिलता जाय तो भोजनके न मिलनेपर भी हम बहुत दिनोंतक जीते रह सकते हैं । ऐसी दशामें शरीर अपने ही आधार पर जीता है । मनुष्य तथा और देह-धारियोंमें चर्बीका भाग अधिक होता है जो भूखे रहनेकी हालतमें खर्च होता है । इससे मांस, रुधिर, मज्जा और मस्तिष्कका पोषण होता रहता है; परन्तु शरीर दुर्बल होता जाता है, चर्बी कम होती है, चमड़ा सूख कर सख्त हो जाता है और दिल और दिमाग हलके होते जाते हैं । पहले दो तीन दिन तक भूख सताती है, फिर धीरे धीरे सुस्ती आती जाती है । यदि मनुष्य इसी तरह छोड़ दिया जाय तो बिना कष्टके कुछ दिनोंमें मर जाय । अनुकूल दशामें अन्न बिना मनुष्य साधारणतः चालीस दिनों तक जीता रह सकता है, यह तो पाश्चात्य विद्वानोंका मत है । भारतीय तपोधन ऋषि मुनि इससे कहीं अधिक काल तक अन्न बिना जीवन रक्षा करते हुए सुने गये हैं ।—(विज्ञानसे)

६ मुकद्दमेबाज़ीका उपदेश ।

जम्बूस्वामी मथुराके मेले पर अभी हाल ही दिगम्बरजैनतीर्थ-क्षेत्र कमेटीका अधिवेशन हुआ है । उसके सभापति महोदयने अपने व्याख्यानमें दिगम्बरजैनसमाजको खूब ही उत्तेजित किया है और कहा है कि तन—मन—धन न्योछावर करके मुकद्दमे लड़ना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए और प्रत्येक तीर्थपर अपने स्वत्वोंकी रक्षा करना चाहिए। जो लोग तीर्थोंके झगड़ोंको आपसमें निबटानेकी सम्मति देते हैं वे दिगम्बर धर्म तथा विधर्म (श्वेताम्बर) को एक करना चाहते हैं। मालूम नहीं ये लोग विधर्मियोंके सामने क्यों अपनी मनुष्यताको खोकर गिड़गिड़ा ते हैं और अपनी दीनता दिखाते हैं। इत्यादि। बड़े अफसोसकी बात है कि जो लोग प्रतिवर्ष मुकद्दमेबाज़ीमें लाखों रुपयोंको पानीकी भाँति बहते देखकर, भाईभाईमें द्वेषकी वृद्धि होते देखकर, संघशक्तिका घात होते देखकर आपसमें निबटारा कर लेनेकी सम्मति देते हैं वे तो मनुष्यताको खोनेवाले समझे जायँ तथा साधारण जनताको उनके विरुद्ध भड़कानेके लिए दिगम्बर श्वेताम्बर सम्प्रदायको एक कर डालनेवाले करार दिये जायँ और जो देशका समाजका सर्वनाश करनेवाली मुकद्दमेबाज़ीके लिए उत्तेजन दिलावें वे मनुष्यश्रेष्ठ और परमधर्मात्मा बननेका दावा करें! यह कहा गया है कि श्वेताम्बरसमाज हमसे द्वेष करता है, हमारे न्याय्य स्वत्वोंकी छीनना चाहता है और आपसमें निबटारा करनेके लिए बिलकुल तैयार नहीं है, तब हम क्यों न मुकद्दमें लड़ें? संभव है कि इस कथनमें बहुत कुछ सत्यता हो; श्वेताम्बर समाजमें भी हमारे समाजके जैसे कट्टर धर्मात्माओंकी और धर्मान्धोंकी कमी नहीं है; परन्तु क्या इससे आपसमें निबटारा करनेका आन्दोलन या प्रस्ताव मनुष्यताको खोनेवाला हो गया, अथवा क्या कभी आपसमें निबटारा होना संभव ही नहीं है, ऐसा सिद्ध हो गया? इस विषयमें अभी हमें बहुत कुछ कहना है, जिसे स्थानाभावके कारण आगेके लिए रखना पड़ा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनहितैषीका कायापलट ।

नये वर्षमें नया आकार, नया रूप, नई बात ।

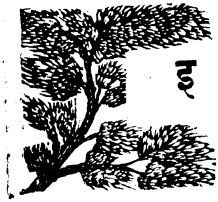

इस अंकके साथ जैनहितैषीका वर्ष समाप्त होता है । अब आगामी वर्षमें हमारे ग्राहक इसे एक नये ही रूपमें और नये ही आकारमें देखेंगे । इसका साइज़ वर्तमान साइज़से दूना कर दिया जायगा । क़ागज़ बढ़िया लगेगा । पृष्ठसंख्या डेढ़गुनीसे भी अधिक कर दी जायगी और हो सका तो प्रत्येक अंकमें कुछ चित्र भी रहा करेंगे । कवर पेज बहुत ही सुन्दर और मनोरम होगा ।

लेखोंमें भी विशेषता होगी । प्रत्येक अंकमें सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक और नैतिक लेखोंके सिवाय शिक्षाप्रद उपन्यास, गल्पें, मनोविनोद और महापुरुषोंके जीवनचरित भी रहा करेंगे । ऐसा कोई अंक न होगा जिसमें कोई जीवनचरित और उपन्यास न हो । स्त्रियोपयोगी लेखोंके लिखवानेका भी प्रबन्ध किया जायगा । कविताओंके लिए कई कविमहाशयोंने वचन दिया है । गरज यह कि हमने इसे जैन समाजका सर्वोत्कृष्ट पत्र बनानेका विचार किया है और निश्चय किया है कि इसके द्वारा जैनसमाजको उन सब बातोंका ज्ञान कराया जाय जिनसे कि वह प्राय अज्ञान है और जिनसे केवल जैनसमाचारपत्रोंके पढ़नेवाले वंचित रहते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऐसे समयमें जब कि काग़ज़का भाव पहलेसे लगभग डेवढ़ा हो गया है और छपाई आदिके चार्ज भी बढ़े हुए हैं हम जो इस बहुव्यय-साध्य कामको करनेके लिए उत्साहित हो गये हैं, इसका कारण एक तो हमारे कई उत्साही मित्रोंकी अतिशय प्रेरणा है और दूसरा हमारे हृदयकी उस सोई हुई इच्छाका जागृत हो जाना है जो जैनसमाजमें एक सर्वाङ्गसुंदर आदर्शपत्रको जन्म देना चाहती है। हमें विश्वास है कि हितैषीके प्रेमी पाठक हमारे इस उत्साहको बढ़ानेमें सब तरहसे सहायता देंगे और हमें आर्थिक कष्टसे पीड़ित न होने देंगे। यदि इस समय उन्होंने एक ही एक ग्राहक बढ़ानेकी कोशिश कर दी, तो जैनहितैषीका नयारूप स्थायी हो जायगा और वह जैनसमाजकी एक अभिमानकी चीज़ बन जायगा।

मूल्य कितना रहेगा ?

इस नये परिवर्तनमें हमें हितैषीका मूल्य अवश्य बढ़ाना पड़ेगा; परन्तु अपने ग्राहकोंको हम विश्वास दिला सकते हैं कि यह मूल्यकी वृद्धि हम अपने लाभ या मुनाफ़ेके लिए नहीं करते हैं। हितैषीसे हमें कभी मुनाफ़ा हुआ नहीं और हम इससे मुनाफ़ेकी आशा रखते भी नहीं हैं। यदि इसका ख़र्च इसमें ही निकल आया करे, तो हम सन्तुष्ट हैं। हम अपने परिश्रमके बदलेमें इससे एक पैसेकी भी आशा नहीं रखते हैं। हमने जो नये वर्षके ख़र्चका हिसाब लगाया है, उसके अनुसार इसका मूल्य **तीन रुपयेसे** कम नहीं रक्खा जा सकता है। और इस मूल्यमें भी तब पूरा पड़ेगा जब हमारे वर्तमान ग्राहक ज्योंके त्यों बने रहकर कमसे कम २०० ग्राहक और भी बढ़ जायँ। इस कारण—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान ग्राहकोंसे प्रार्थना।

है कि वे मूल्यके कुछ अधिक होजानेका ज़रा भी ख़याल न करें और कमसे कम एक वर्षतक और भी इसके ग्राहक बने रहें। रुपया बारह आनेका अधिक ख़र्च इसके लिए कोई बड़ी बात नहीं हैं। इसके सिवाय अपने मित्रोंमेंसे भी एक एक दो दो ग्राहक बना देनेकी कृपा करें।

उपहारमें एक अच्छा उपन्यास

देनेका प्रबन्ध किया है। इतना अच्छा उपन्यास कि जिससे अच्छा हमारे ग्राहकोंने अपने जीवनमें कभी पढ़ा भी न होगा। यह सामाजिक उपन्यास पवित्र और ऊँचे विचारोंसे भरा हुआ है। करुणरसपूर्ण है। पढ़कर पाठक रोये बिना न रहेंगे। मूल्य उसका बारह आने है। इस मूल्यमें वह खूब बिक रहा है, परन्तु हितैषीके ग्राहकोंको

बिलकुल मुफ्तमें

दिया जायगा। उपहारी ख़र्च, डांक ख़र्च आदि कुछ भी न लिया जायगा। पहले अंकके साथमें ३-) तीन रुपया एक आनेके वी. पी. से भेज दिया जायगा। गत वर्ष हमने अपने ग्राहकोंसे उपहारसहित हितैषीका मूल्य २।-) लिया था, और इस वर्ष ३-) लेंगे। इस हिसाबसे देखा जायगा जो पहलेसे सिर्फ़ बारह आने ही अधिक देना पड़ेंगे।

दो महीनेकी छुट्टी।

नया इन्तजाम करनेके लिए, कवरके लिए चित्रादि बनवानेके लिए समय चाहिए, इसलिए हम दो महीनेकी छुट्टी लेना चाहते हैं। अर्थात् हितैषीका पहला अंक जनवरीमें निकलेगा और तभीसे इसका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वर्ष प्रारंभ होगा। अबतक इसका वर्ष दिवालीसे प्रारंभ होता था, परन्तु आगे अँगरेज़ी सालसे हुआ करेगा। इस दो महीनेके अवसरमें हम

प्रतीक्षा

करेंगे कि हितैषीके प्रेमी पाठक इस बीचमें कितने नये ग्राहक बनाकर भेजते हैं और कितने महाशय ग्राहकश्रेणीसे अपना नाम जुदा करवा लेते हैं। इस अंकके साथ छपा हुआ कार्ड भेजा जाता है, उसे भरवाकर भिजवानेकी प्रत्येक ग्राहक और पाठकसे पुनः पुनः प्रार्थना है। —सम्पादक।

मुफ्तमें जैनहितैषी।

पिछले तीन चार वर्षोंके हमारे यहाँ बहुतसे अंक पड़े हैं। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि हितैषीके प्रत्येक अंकमें अच्छे और पढ़ने योग्य लेख होते हैं। उसकी प्रत्येक लाइन कामकी होती हैं। इस लिए जो महाशय पिछले लेख पढ़ना चाहें, वे हमारे पास केवल डांक खर्चके लिए कुछ टिकिट भेज देवें। हम उनके पास पिछले अंकोंमेंसे कोई अंक उठाकर भेज देंगें। उनके भेजे हुए टिकिटोंमें जितने वजनके अंक जा सकेंगे उतने ही भेज दिये जावेंगे। एक पैसेके टिकिटमें एक अंक जा सकता है। अमुक अंक ही भेजो ऐसी आज्ञाका पालन हम न कर सकेंगे, जो अंक मौजूद होंगे वे भेज दिये जावेंगे। ग्राहक महाशयोंको चाहिए कि पिछले अंक अपने मित्रोंको मुफ्तमें मँगा दें और यदि उन्हें लेख पसन्द आ जायँ तो ग्राहक बननेकी प्रेरणा कर दें।

मैनेजर।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

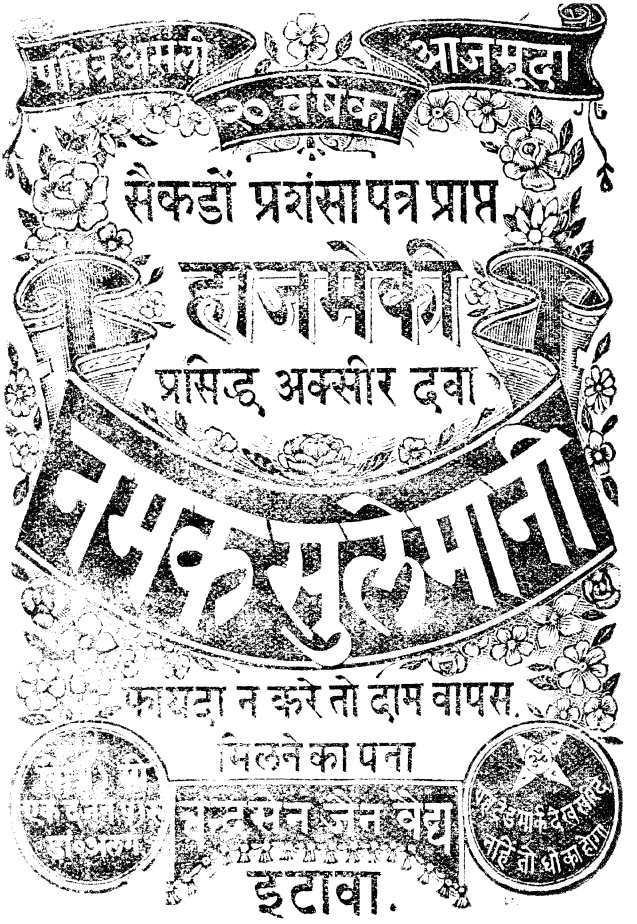

दद्रुदमन—दादकी अक्सीर दवा फी डबी ।)

दन्तकुमार—दांतोंकी रामबाण दवा । डबी ।)

नोट—सब रोगोंको तत्काल गुण दिखानेवाली दवाओंकी बड़ी सूची

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रीय ग्रन्थ ।

१ सरल-गीता । इस पुस्तकको पढ़कर अपना और अपने देशका कल्याण कीजिये । यह श्रीमद्भगवद्गीताका सरल-हिन्दी अनुवाद है । इसमें महाभारतका संक्षिप्त वृत्तान्त, मूल श्लोक, अनुवाद और उपसंहार ये चार मुख्य भाग हैं । सरस्वतीके सुविद्वान् संपादक लिखते हैं कि यह 'पुस्तक दिव्य है ।' मूल्य ।।।)

जयन्त । शेक्सपियरका इंग्लैंडमें इतना सम्मान है कि वहांके साहित्यप्रेमी अपना सर्वस्व उसके ग्रन्थोंपर न्योछावर करनेके लिए तैयार होते हैं । उसी शेक्सपियरके सर्वोत्तम 'हैम्लैट' नाटकका यह बड़ा ही सुन्दर अनुवाद है । मूल्य ॥=); सादी जिल्द ॥)

३ धर्मवीर गान्धी । इस पुस्तकको पढ़कर एक बार महात्मा गान्धीके दर्शन कीजिये, उनके जीवनकी दिव्यताका अनुभव कीजिये और द० अफ्रिकाका मानचित्र देखते हुए अपने भाइयोंके पराक्रम जानिये । यह अपूर्व पुस्तक है । मूल्य ।)

४ महाराष्ट्र-रहस्य । महाराष्ट्र जातिने कैसे सारे भारतपर हिन्दू साम्राज्य स्थापित कर संसारको कंपा दिया इसका न्याय और वेदान्तसंगत ऐतिहासिक विवेचन इस पुस्तकमें है । परन्तु भाषा कुछ कठिन है । मूल्य -)॥

५ सामान्य-नीतिकाव्य । सामाजिक रीतिनीतिपर यह एक अनूठा काव्य ग्रन्थ है । सब सामयिक पत्रोंने इसकी प्रशंसा की है । मूल्य =)

इन पुस्तकोंके अतिरिक्त हम हिन्दीकी चुनी हुई उत्तम पुस्तकें भी अपने यहाँ विक्रयार्थ रखते हैं ।

नवनीत-मासिक पत्र । राष्ट्रीय विचार । वा० मूल्य २)

यह अपने ढंगका निराला मासिक पत्र है । हिन्दू देश, जाति और धर्म इस पत्रके उपास्य देव हैं । आत्मिक उन्नति इसका ध्येय है । इतना परिचय पर्याप्त न हो तो ।-) के टिकट भेजकर एक नमूनेकी कापी मंगा लीजिये ।

ग्रन्थप्रकाशक समिति, नवनीत पुस्तकालय.

पत्थरगली, काशी.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लन्दनके पत्र ।

यह पुस्तक हाल ही छपकर तैयार हुई है। इसमें एक देशहितैषी बैरिस्टर हबने विलायतसे जो पत्र भेजे थे, उन सबका संग्रह है। पत्रोंमें भारतवा-योंके लिए देशसेवा, जातिसेवा, साहित्यसेवा करनेका संदेशा है। बड़ी ही शीली, उत्साहवर्धक और देशभक्तिपूर्ण बाते लिखी हैं। प्रत्येक नवयुवाको यह तक पढ़ना चाहिए। विलायतकी बहुत सी जानने योग्य बातें भी इससे लूम होंगीं। इसमें ऐसी ऐसी पचासों अँगरेजी पुस्तकोंके नाम बतलाये हैं नका यहाँकी देश भाषाओंमें अनुवाद होना चाहिए। मूल्य इस पुस्तकका र्फ़ तीन आने है।

मितव्ययिता ।

सी. पी. और बरारके स्कूलोंकी लायब्रेरियोंके लिए और विद्यार्थियोंको ाम देनेके लिए इस पुस्तकको सरकारने मंजूर कर लिया। बड़ी ही अच्छी स्तक है। प्रत्येक जैनपाठशालामें भी इस पुस्तकको इनाममें देनेकी व्यवस्था ना चाहिए। जैनसमाजमें फ़िजूल ख़र्ची और विलासिता सबसे अधिक बढ़ ी है और इस पुस्तकमें इन दोषोंको दूर करनेकी आश्चर्यकारिणी शक्ति है। स लिए इसका जैनोंमें जितना अधिक प्रचार हो उतना अच्छा। इसे बाबू याचन्दजी बी. ए. ने स्माइल्सके 'थ्रिफ्ट' नामक ग्रन्थके आधारसे लिखा । मूल्य चौदह आने।

इनामम देने योग्य और आर पुस्तकें ।

ताके उपदेश	मूल्य ⅀॥	चरित्र गठन और मनोबल	⅀॥
च्छी आदतें डालनेकी शिक्षा	⅀॥	सफलता	।॥)

मैनेजर, **हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर, कार्यालय,**
हीराबाग, पो० गिरगाँव-**बम्बई.**

Printed by C. S. Deole, at the Bombay Vaibhav Press, Servants of India Society's Building, Sandhurst Road, Girgaon Bombay, & Published by Nathuram Premi at Hirabag, Near C. P. Tank Girgaon, Bombay.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कलकत्ते के प्रसिद्ध डाक्टर बर्म्मन की

कठिन रोगों की सहज दवाएं।

गत ३० वर्ष से सारे हिन्दुस्थानमें घर घर प्रचलित हैं। विशेष विज्ञापन की कोई आवश्यकता नहीं है, केवल कई एक दवाइयों का नाम नीचे देते हैं।

हैज़ा गर्मी के दस्त में

असल अर्ककपूर

मोल ।) डाःमः=) १ से ४ शीशी

पेचिश, मरोड़, ऐठन, शूल, आंव के दस्तमें—

क्लोरोडिन

मोल ।=) दर्जन ४) रुपया

कलेजे की कमजोरी मिटानेमें और बल बढ़ाने में—

कोला टौनिक

मोल १) डाः ।-) आने।

पेट दर्द, बदीके लक्षण मिटानेमें

अर्कपूदीना [सब्ज]

मोल ॥) डाःमः ।-) आने।

अन्दरके अथवा बाहरी दर्दमिटानेमें

पेन हीलर

मोल ॥) डाः मः ।-) पांच आ

सहज और हलका जुलाबके लि

जुलाबकी गोली

२ गोली रातको खाकर सो सवेरे खुलासा दस्त होगा। १६गोलियोंकी डिब्बी।-) डाःम १ से ८ तक ।-) पांच आने.

पूरे हालकी पुस्तक विना मूल्य मिलती है दवा सब जगह हमारे एजेन्ट और दवा फरोशोंके पास मिलेगी अथवा—

डाः एस, के, बर्म्मन ५, ६, ताराचंद दत्त ष्ट्रीट, कलकत्ता।

(इस अंकके प्रकाशित होनेकी तारीख़ १०-१०-१५।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org